श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः

गौडीय वैष्णवाचार्य श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती विरचित

श्रीआश्चर्यरासप्रबन्धः

हिन्दी अनुवाद सहित

गौडीयसम्प्रदायाचार्य
श्रीहरिदास शास्त्रीणा सम्पादितः

आधुनिक प्रतिलिपि संस्करण

पण्डित श्रीरघुनाथ दास शास्त्रीजी महाराज
व्याकरण,वेदान्तदर्शन,(श्रीधामवृन्दावन)

प्रकाशक :—

श्रीहरिदासशास्त्री

श्रीहरिदास निवास।
पुराणा कालीदह।
पो०—वृन्दावन।
जिला—मथुरा।
(उत्तर प्रदेश)

प्रकाशनतिथि

श्रीराधाष्टमी
१४।९।१९८३
गौराङ्गाब्द—४९७

द्वितीयसंस्करणम्

प्रकाशनसहायता—

मुद्रकः—

श्रीहरिदास शास्त्री

श्रीगदाधरगौरहरि प्रेस,
श्रीहरिदास निवास, कालीदह,
पो० वृन्दावन, जिला—मथुरा,
(उत्तर प्रदेश) पिन—२८११२१

श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्

श्रीरासप्रबन्धः

श्रीपाद प्रबोधानन्दसरस्वतीविरचितः

सच

श्रीवृन्दावनधामवास्तव्येन

न्याय-वैशेषिकशास्त्रिन्यायाचार्य्यकाव्यव्याकरण
सांख्यमीमांसावेदान्ततर्कतर्कतर्कवैष्णवदर्शनतीर्थ
विद्यारत्नाद्युपाध्यलङ्कृतेन **श्रीहरिदासशास्त्रिणा**
सम्पादितः।

सद्ग्रन्थ प्रकाशक :—

श्रीगदाधरगौरहरि प्रेस,
श्रीहरिदासनिवास, कालीदह, वृन्दावन,
जिला—मथुरा, उत्तर प्रदेश।

❋ श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् ❋

❋—❋❋—❋

विज्ञप्तिः

श्रीरास प्रबन्ध नामक ग्रन्थ—मुद्रित हुआ, यह ग्रन्थ आश्चर्यरास प्रबन्ध, अद्भुतरासप्रबन्ध नाम से प्रसिद्ध है, ग्रन्थ रचयिता श्रीपाद प्रबोधानन्दसरस्वती हैं। श्रीमद् भागवतीयरासलीला के अनुसरण से यह ग्रन्थ लिखित होने पर भी गुम्फन वैचित्री से यह एक अनुपम आस्वादनीय ग्रन्थ में परिणत हुआ है प्रथमत ३, २५, ३४, ४६, ६१, ७०, १२३, १५६, १७०, २०४, २१६, २३२, २४०, २५२,

२६६,२८०, श्लोक विभिन्न छन्दों में रचित होकर यह सूत्र स्थानीय हैं, एवं २८० श्लोक सम्पूर्ण रास प्रबन्धका निष्कर्ष प्रतिपादक है,सूत्र स्थानीय श्लोक के अवलम्बन से विवृत्ति रूप श्लोक समूह पज्भटिका छन्द से ग्रथित हुआ है। उसका लक्षण—प्रतिपद यमकित षोड़श मात्रा नवमगुरुत्व विभूषित गात्रा, पज्भटिका पुनरत्र विवेकःक्वापि न मध्य गुरुगणएकः।

अन्यान्य ग्रन्थ में श्रीसरस्वतीपाद प्रेमोन्मत्त होकर धारावाहिक रचना में असमर्थ थे, किन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ में आप की धारा वाहिक रचना सफल हुई है, आप की भाषा में पुष्पित वृन्दावन का दृश्य इस प्रकार है—

कुसुमितपल्लवितद्रुमवल्लिस्फुटितकदम्बककिंशुकमल्लि
स्मेरकुमुदकरवीरविराजि, प्रहसितकेतकचम्पकराजि ।।१०।।
विकसित कूटज कुन्द मन्दारं सुफलितपनसपूगसहकारं
हरिचरणप्रिय तुलसी विपिनैः शोभमानमुरुपरिमलमसृणैः ।।११।
विलसज्जातीयूथिकमतुलं विकचस्थलपङ्कजवकमञ्जुलं
सन्ततसन्तानकसन्तानंबरहरिचन्दनचन्दनविपिनं ।।१२।।
पारिजातवनपरमामोदं राधाकृष्णजनितबहुमोदम्
कुरुवकमरुवकमाधविकाभि र्दमनकदाडिममालतिकाभिः ।।१३।।
शेफालिकया नवमालिकया शोभितमपि बहुविधझिण्टिकया
ललितलवङ्गवनरतिमधुरं नवपुन्नागरचितरुचिरम् ।।१४।।
स्तवकितनवकाशोकवनालि स्मेरशिरीषपरिस्फुटपाटलि।
बन्धुरमभिनवबन्धुकविपिनैः शोभितमभितस्तिलकाम्लानैः ।।१५।।

ग्रन्थ नाम करण में आश्चर्य एवं अद्भुत शब्द प्रयोग से इसमें यथेष्ट वैलक्षण्य एवं अद्भुतत्व है, श्रीपादने प्रथमतः ३-२४ श्रीवृन्दावन की वर्णना भी की है, यह भी वृन्दावन शतक के अनुरूप है, २५-३२ में श्रीकृष्ण के रास विलासी रूप की वर्णना है, ३४, में कदम्ब तरुतल में त्रिभङ्ग भङ्गिमरूप में श्रीराधा नाम से मोहन वंशी वादन

करने पर ३५-४८ विपर्यस्त वेशभूषा से गोपियों का अभिसार, ५० श्यामानुराग से श्रीराधा का भाव की विवृति, ५६ मुरलीनिनाद श्रवण से अभिसारोद्यता राधा के प्रति सखियों का निषेध वचमवर्णित ६०।६१ श्रीराधा का अदर्शन से श्रीकृष्ण की विरह वेदना,६२-६६ गोपीगण की रस लालसा को देखकर ७०-७१श्रीकृष्ण द्वारा निज विधुरताख्यापन,७२ श्रीराधा से मिलने के लिए गोपीगणके परामर्श से दूतीप्रेरण, ७३-दूती के मुख से श्रीकृष्ण की राधातन्मयता, राधा निष्ठा, एवं गोपीजन लाम्पट्य की वर्णना, ६३-६६ स्वप्न में श्रीकृष्ण का श्रीराधा दर्शन, एवं रसमय वाक्यालाप श्रवण, ६७-६६-राधानाम जपकारी श्रीकृष्ण की राधा प्राप्तिहेतु वेणुध्वनि, १०० १०३ श्रीराधा विहारी श्रीकृष्ण का विलाप, गोपीगण की उपेक्षा, १०४-१०६ श्रीकृष्ण के विलाप से वृन्दावनीय स्थावर जङ्गम के रोदनादि, १११-१२० ललिता द्वारा श्रीराधा के अभिसार में बाधा प्रदान, १२२, १२४, दुती के मुख से श्रीराधा की निरोध वार्ताको सुनकर गोपी वेश से कृष्ण का अभिसार,१२५-१३७ उनके मुख से श्रीराधा की प्रशंसा एवं श्रीहरि का निर्दोषत्वख्यापन, १३८-१४८ श्रीराधा मिलन हेतु श्रीहरि की तीव्रतर उत्कण्ठा का प्रतिपादन १५१-१५५-श्रीकृष्ण के रूप सादृश्य को देखकर उनके प्रति श्रीराधा की परम प्रीति एवं आलिङ्गन दान। १५६-१५६ इस परिरम्भण से परिचय प्राप्तकर श्रीराधा का कुञ्जगृह में प्रवेश एवं अङ्ग सङ्ग दान १६२-१६७ युगलकिशोर के रासोपयोगी पुनर्वेशधारण, १६७-१७२ निखिल कलावित् सखीगण के साथ वृन्दावन में प्रवेश, १७३-१८२ सखी गण की सेवादि, १८३-१६० बहुमूर्त्ति प्रकटन द्वारा निज काय व्यूह रूपा सखीगणके साथ रासोपभोग हेतु श्रीराधा का प्रेरणा प्रदान १६१-२०२ विविध रसास्वादन, २०३--२०४ सखीगण के अभिमान प्रशमन हेतु श्रीराधा के साथ श्रीकृष्ण का अन्तर्धान । २०५-२१२ गोपीगण का सर्वत्र कृष्णान्वेषण एवं जिज्ञासा। २१३-२१४ श्रीहरि

पदाङ्क २१५ एवं श्रीराधा पदचिह्न दर्शन से २१६-२२४ उनका विलासानुमान, २२५--२२६ सखीगण के लिए श्रीराधा का खेद प्रकाश, एवं चलनेमें असम्मति, २२७ श्रीकृष्णका पलायन, २२०-२३० श्रीराधा की मूर्छा, सखी समागम ।२३२ श्रीकृष्णाविर्भाव २३३-२३६ गोपियों की भावविह्वलता २३७-२६८ व्रजाङ्गनागण के साथ रासोत्सव, २६६-२७६ श्रीराधाकृष्ण का युगपत् एवं क्रम नृत्य, गोपियों के गान वाद्य प्रभृति रसमय एवं काममय उत्सव, २७७-२७८ जलकेलि, २७६ वसन भूषणादि का परिधान एवं कुञ्ज में शयन इस प्रकार २८१ प्रबन्ध का निष्कर्ष यह है —

परम रस समुद्रोज्जृम्भणस्यातिकाष्ठा
परमपुरुषलीलारूपशोभातिकाष्ठा
परमविलसदाद्यप्रेमसौभाग्यसूमा
जयति परपुमर्थोत्कर्षसीमा स रासः ।

वह रास परमरस सागर की प्रकाशशील चरमावधिपरम पुरुष लीला, रूप शोभा की चरमावधि, परम विलासमय आद्य शृङ्गार प्रेम एवं सौभाग्यातिशय व्यञ्जक एवं परमपुरुषार्थशिरोमणि की सीमा रूप में जय युक्त हो।

श्रीरास प्रबन्ध शब्द से भी भगवत् प्रेयसी रूपा लक्ष्मी गण, कवित्व सङ्गीतादि स्वरूपा सरस्वती गण, मेधा सत्प्रतिभादिरूप बुद्धि वृत्ति समूह, धर्म, अर्थ, काम, एवं सम्पद् रूपा विभूतिगण, शोभा स्वरूप, चामर व्यजनादि श्रीकृष्ण सेवाके उपकरण एवं वेशरचनादि बहुल क्रीड़ारसास्वादन ही, रास है, उक्त सामग्री समूह ही श्रीराधा है, एवं श्रीराधा ही मूल भक्ति स्वरूपिणी है। गौतमीय तन्त्र में श्रीराधा का स्वरूप वर्णन में लिखित है—

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता
सर्वलक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परा ॥

श्रीकृष्ण जिस प्रकार मूल भगवान् हैं, अतएव उनके अंश समूह भी उनमें अन्तर्भुक्त हैं, उस प्रकार श्रीराधा भी उनकी प्रधाना प्रेयसी होने के कारण आप मूल लक्ष्मी हैं, एवं उनमें ही उनकी अंश भूता यावतीय लक्ष्मी गण के सुस्पष्ट समावेश हैं। अतएव आप सर्वलक्ष्मी मयी हैं, पाशाक्रीड़ा एवं वाकोवाक्य में जयेच्छु होने के कारण आप देवी हैं, अतएव आप में सरस्वती शालिनत्व एवं बुद्धि शालिनत्व विद्यमान है, परदेवता शब्द से धर्म, अर्थ, काम सम्पद्युक्तता का बोध होता है, कृष्णमयी—कृष्ण स्वरूपा, अतएव विभूति युक्तता है सर्वकान्ति—शोभा शालिनीत्व है, राधिका आराधिका, अतएव सर्वविध कृष्ण सेवा के उपकरण सम्पन्नात्व हैं। परा सम्मोहिनी शब्द से वेश रचना शालिनीत्व का बोध होता है। इस प्रकार राधा प्रधान क्रीड़ा ही रास है और यह भक्ति का चरम दृष्टान्त स्थल है। उसका प्रकार ४६ श्लोक में आपने कहा है,

न लोक वेद व्यवहार मात्रं न गेह देह द्रविणात्मजादि।
यत्राविवं स्ता न पथोऽपथो वा स कोऽपि जीयादिह कृष्ण भावः॥

गोपीगण जिसभावसे समाक्रान्त चित्त होकर लोक व्यवहार वेद मर्यादा प्रभृति को भूलगई थीं, जो भाव—गृह, देह, धन, पुत्रादि को भी विस्मृत करा देता है, जिससे गोपीगण सुपथ विपथ कुछ भी जान न सकीं, वह अनिर्वाच्य कृष्णभाव ही इस जगत् में अमरत्व को प्राप्त करे॥

आप की रचितग्रन्थावली में सर्वत्र भाव एवं भाषा की एकता अक्षुण्ण है, परकीया भावका वर्णन आपके ग्रन्थ में सुस्पष्ट है, चैतन्य चन्द्रामृत श्रीराधारससुधानिधि, श्रीवृन्दावनमहिमामृत श्रीसङ्गीत माधव, आश्चर्यरासप्रबन्ध, श्रीश्रुतिस्तुतिव्याख्या, श्रीगीतगोविन्द व्याख्या, कामगायत्रीव्याख्या, गोपाल तापनी व्याख्या ग्रन्थसमूह के रचयिता श्रीप्रबोधानन्दसरस्वतीपाद हैं।

श्रीहरिदासशास्त्री

❀ श्रीश्रीगौरगदाधरौ जयतः ❀

—❀❀—

श्रीरासप्रबन्धः

—❀❀—

जयति जयति राधापाङ्ग सङ्गीभुजङ्गी
कवलित उरुबाधा मूर्च्छितोऽनन्यसाध्यः।
तदधर सुधयोच्चै र्जीवितः श्यामधामा
तदति विषविषङ्गेणेव कश्चित् किशोरः॥१
जयति जयति वृन्दारण्यचन्द्रोऽतिचित्रो
न्मदरसमयरासोल्लाससंभ्रान्तमूर्त्तिः।
प्रमदमदनलीलामोहनश्यामाधामा
निरुपमसुखसीमाभीररामाभिरामः॥२

—❀❀—

राधागदाधरं नत्वा कृष्णचैतन्यसंयुतं
श्रीरासस्यप्रबन्धानां व्याख्याग्रन्थो विधीयते॥

श्रीराधा की अपाङ्ग सङ्गिनी भ्रू सर्पिणी द्वारा दष्ट एवं अनेक प्रकार पीड़ा से मूर्च्छित, अन्यान्य उपायों से दुश्चिकित्स्य होने पर भी श्रीराधा के अधर सुधा आस्वादनसे महाविष विनष्ट होने पर पुररुज्जीवित श्याम वर्ण के किसी अनिर्वचनीय किशोर की जय हो जय हो॥१॥ अतिशय विचित्र उन्मद रसमयरास के उल्लास से विभोर मूर्ति, उन्मद मदन लीलाके आवेश से मोहन स्वरूप, निरुपम सुख की सीमाप्राप्त गोप रमणीयों से वेष्टित परमरमणीय श्रीवृन्दावन चन्द्र श्याम सुन्दर की जय हो, जय हो॥२॥ वृन्दावन नामक एक महा

अस्तिमहाद्भुतवृन्दारण्यं सन्तत वाहि महारसवन्यम् ।
परम मनोहर परम सुपुण्यं रसमय सकलधाममूर्धन्यम् ॥३
सकल गुणानां स्फुरदति भूमि, प्रोज्ज्वल चिन्तामणिमयभूमि
श्रुतिर्दुर्गम तृणमात्रा विभूति स्फीतमहासुखसिन्ध्वनुभूति ॥४
प्रकृति परे परिपूर्णानन्दे महसि महाद्भुत हरिरसकन्दे ।
भ्राजमानमखिलोज्ज्वलरम्यं मधुरविशदहरिभावसुगम्यम् ॥५
मुख्य रसात्मकपरमाकारं विमलमनोज वीजरुचिसारम् ।
मायाविद्यापारमपारं राधामाधव नित्यविहारम् ॥६
राधामधुपतिचारुपदाङ्कै रङ्कितमतुलसुधारसपङ्कैः ।
स्वच्छ सुशीतल मृदुल सुवासं विभ्रदवनितलमद्भुतभासम् ॥७
क्वचन परागपुञ्जकमनीयंक्वचमकरन्दपूररमणीयम् ।
क्वचनगलितकुसुमैः कृतशोभक्वच मणिकर्पुररज रुचिराभम्

अद्भुत धाम है, जिससे शृङ्गार नामक महारस की वन्या निरन्तर प्रवाहित हो रही है, जो परम मनोहर एवं परम पवित्र है, सकल रसमय धाम की शिरोमणि स्वरूप है ॥३॥ निखिल गुणों के आकर स्वरूप उक्त धाम की भूमि अतिउज्ज्वल चिन्तामणिमय है, उस भूमि के एक तृण की विभूति भी श्रुति समूह के अगोचर व दुर्बोध्य है, उस में उच्छलित महासमुद्र की अनुभूति होती रहती है ॥४॥ उक्तधाम प्रकृति से अतीत परिपूर्णानन्द, महा अद्भुत हरि रस कन्द(बीज) स्वरूप ज्योति में विराजमान है। तत्रत्य निखिल वस्तु ही उज्ज्वल, रम्य, अथवा उज्ज्वल शृङ्गाररस से रम्य एवं मधुर, विशुद्ध होने पर भी श्रीहरि भक्ति से ही लभ्य व सुलभ है, मुख्य शृङ्गार रसात्मक सुन्दराकृति विशुद्ध कामबीज की कान्ति से अत्युत्कृष्ट होकर माया, अविद्या के अतीत में स्थित है एवं श्रीराधा माधव के अपार नित्यविहार स्थल है ॥६।७॥ श्रीराधा मधुपति के सुचारु पदाङ्क से एवं अतुलनीय

सन्ततफलकुसुमादिविचित्रैः कोटिमहासुरपादपजैत्रैः ।
गुल्मलतातरुभिः सुपवित्रैर्मण्डितमीशजुषामपिचित्रैः ॥९॥
कुसुमितपल्लवितद्रुमवल्लिस्फुटितकदम्बकर्किशुकमल्लि ।
स्मेर कुमुदकरवीरविराजि प्रहसितकेतकचम्पकराजि ॥१०॥
विकसितकूटजकुन्दमन्दारं सुफलितपनसपूगसहकारम् ।
हरिचरणप्रियतुलसीविपिनैः शोभमानमुरुपरिमलमसृणैः॥११
विलसज्जातियूथिकमतुलं विकचस्थलपङ्कजवकवञ्जुलम् ।
सन्तनसन्तानकसन्तान वरहरिचन्दनचन्दनविपिनम् ॥१२॥
पारिजातवनपरमामोदं राधाकृष्णजनितबहुमोदम् ।
कुरुवकमरुवकमाधविकाभिर्दमनकदाडिममालतिकाभिः ॥१३
शेफालिकया नवमालिकया शोभितमपिबहुविधझिण्टिकया ।
ललितलवङ्गवनैरतिमधुरं नवपुन्नागरुचिरुचिरम् ॥१४॥

सुधारस पङ्क द्वारा अङ्कित है, स्वच्छ सुशीतल मृदुल, सुवासित एवं अद्भुत कान्तिपूर्ण भूमिखण्ड से शोभित है ॥७॥ कहीं पर पराग पुञ्ज से परम कमनीय, कहीं पर मणि कर्पूर रज की आभा से मण्डित है ॥८॥ निरन्तर फल कुसुमादि सम्भार से विचित्र कोटि कोटि महाकल्पवृक्ष समूह भी जय शील परम पवित्र एवं ईश्वर सेवीगण के लिए विस्मय हेतु वनकर लता गुल्म तरुगण द्वारा उक्त धाम सुशोभित है ॥९॥ उसके प्रति वृक्ष प्रति लता कुसुमित पल्लवित हैं, कदम्ब पलाश मल्लिका वृक्षगण प्रस्फुटित हुए हैं। उसमें ईषत् विकसित कुमुद करवीर पुष्प विराजित हैं, एवं केतकी चम्पक राशि हँस रहें हैं ॥१०॥ कुटज, कुन्द, मन्दार पुष्पसमूह विकसित हैं, पनस गुवाक, आम्रवृक्ष समूह में सुन्दर सुन्दर फल लगे हुए हैं। महापरिमल से सुस्निग्ध हरिचरण प्रिय तुलसी कानन द्वारा सुशोभित है ॥११॥ उसमें अतुलनीय जाति, युथिका प्रभृति विलसित हैं, स्थलपद्म, वक वञ्जुल (अशोक, वेतस) प्रस्फुटित हैं, निरन्तर सन्तानक (कल्पवृक्ष) समूह वंशविस्तार कर रहे हैं ॥१२-१३॥

स्तवकितनवकाशोकवनालिरमेरशिरीषपरिस्फुटपाटलि ।
बन्धुरमभिनवबन्धुकविपिनैः शोभितमभितस्तिलकाम्लानैः ॥
निज निजविभवैः प्रतिपदमधिकं विलसदनन्तजातितरुलतिकम्
निरवधिवर्धि मधुरगुणसिन्धुसुविचिरनिन्दितकोटि रवीन्दु ॥
वापीकूपतड़ागैर्ललितं मणिमयकेलिमहीधरमहितम् ।
रासोचितमणिकुट्टिमराजंरञ्जयदेक विमलरसराजम् ॥१७॥
रक्तकनक कर्पूरपरागंविभ्रद् रविजापुलिनसुभागम् ।
राधामाधवकेलिनिकुञ्जं दधदतिमञ्जुगुञ्जदलिपुञ्जम् ॥१८॥
मदकलकोकिलपञ्चमरागं स्थिरचर निकरमूर्च्छदनुरागम् ।
मदशिखण्डिकृतताण्डवरङ्गं चकितचकितपरिलोलकुरङ्गम् ॥

पारिजात वन की परम सुगन्ध श्रीराधाकृष्ण को,आनन्द प्रदान कर रही है। कुरुवक, मरुवक, माधविकादि द्वारा दमनक दाड़िम मालतिकादि द्वारा एवं सेफालिका नवमल्लिका, बहुविध झिण्टिकादि द्वारा वह सुशोभित है, ललित लवङ्ग वनराजि से वह अतिमधुर एवं पुन्नाग नागकेशर प्रभृति की कान्ति से अतिमनोहर है॥१४॥ नव नव अशोक वनराजि स्तवकित हैं, शिरीष, कुसुम समूह ईषद् हास्य कर रहे हैं, एवं पाटल पुष्पराशि परिस्फुट हैं। अभिनव बन्धुक (बान्धुलि)पुष्पवन समूह के द्वारा मनोहर है, एवं चतुर्दिक में प्रस्फुटित अम्लान पुष्प वृक्षराजि से सुन्दर शोभित है ॥१५॥ अनन्त प्रकार तरु लतादि क्षण क्षण में अधिकतर निज निज शोभासमृद्धि प्रकटित कर रहे हैं। उसमें निरन्तर मधुर गुण सिन्धु वृद्धि प्राप्त हो रहे हैं एवं उसकी ज्योति से कोटि कोटि सूर्यचन्द्रादि भी अनादि काल तक म्लान होकर रहते हैं ॥१६॥ बापी, कूप, तड़ागसमूह से सुशोभित मणिमय केलि पर्वतसमूह व्याप्त रासोचित मणि कुट्टिमसमूह विराजित वृन्दावन रसराज श्रीकृष्ण को सुखी करता है ॥१७॥ श्रीवृन्दावनस्थ यमुना पुलिन में सुन्दर सुन्दर भूखण्ड (स्थल विशेष) रक्त, स्वर्ण, एवं

परमविचित्रतराकृतिरावैः खगपशुभिर्बहुभिर्बहुभावैः ।
शोभितमपि शुकसारीनिचयैं वरदम्पत्योः स्वपदविनेयैः ॥२०॥
अत्यद्भुततम ऋतुषट्कश्रिश्रंसितनैः श्रेयसि विपिनश्रि ।
मन्दसुगन्ध सुशीतलमरुता जुष्टममृतयमुनाम्भसिविशता ॥२१॥
आद्य विशुद्ध महारस रूपं खेलदेकवरमन्मथभूपम् ।
सान्द्रानन्दपरमरसकाष्ठं राधानागरभावगरिष्ठम्॥ २२॥
अधिललितादिक सुललितभावं प्रकटितसहजरसवदनुभावम्
निखिलनिगमगणदुर्गममहिमप्रेमानन्दचमत्कृतिसीम ॥२३॥
शारदचन्द्रकरखचितं स्फीतरसाम्बुधिवीचीनिचितम् ।
अधिरजनीमुखमुज्ज्वल वेशः कोऽपि किशोरस्तत्र प्रविवेश ॥

कर्पूर परागवर्ण के हैं, वह अति मनोज्ञ है। भ्रमर समूह द्वारा गुञ्जरित श्रीराधामाधव के केलि निकुञ्ज से सुशोभित भी है॥१८॥ उसमें मदकल कोकिलों का पञ्चमराग श्रुत होता है, वहाँ के स्थावर जङ्गमात्मक जीव निचय अनुराग की प्रबलता से मूर्च्छित होते हैं मदमत्त मयूरगण भी ताण्डव नृत्य से सब के कौतूहल विस्तार करते रहते हैं, एवं भयभीत महाचञ्चल हरिणगण इतस्ततः विचरण कर रहे हैं ॥१९॥ परम विचित्र आकृति धारी एवं काकलि ध्वनि युक्त बहुभाव युक्त अनेकानेक पशु पक्षि समूह द्वारा श्रीयुगल किशोर के चरण प्रान्त में उपनीतशुक सारी समूह से भी शोभित है ॥२०॥ महाअद्भुततमषट् ऋतु की शोभा समन्वित वहाँ के कानन-श्रीमहा मङ्गल के निदान स्वरूप हैं। अतिसुन्दर यमुना के जलस्पर्शी मन्द सुगन्ध एवं सुशीतल पवन द्वारा उक्त वृन्दावन शोभित है ॥२१॥ श्रीवृन्दावन, आद्य विशुद्ध महारस शृङ्गार स्वरूप एक मात्र महा मन्मथ राज की क्रीड़ा भूमि है, उसमें राधा एवं तदीय नागर के भाव से गरिष्ठ सान्द्र आनन्द परम की काष्ठा चरमसीमा वर्तमान हैं ॥२२॥ श्रीवृन्दावन ललितादि सखीगण के सुललित भाव माधुर्य का वहन करता है, उसमें सहज रसमय अनुभाव

महाचमत्कारनिधानरूपविलासभूषादिभिरत्यपूर्वः ।
रासोत्सवायप्रविशन् प्रदोषे वृन्दाबनं नन्दतिकृष्णचन्द्रः ॥२५॥
रसमयलील: कुवलयनील: सकलयुवतिमोहनगुणशील: ।
कुञ्चितकेशः सकलकलेशःपीतपटाञ्चितपृथुकटिदेशः ॥२६॥
मकराकृतिमणिकुण्डलदोलस्फुरदतिरुचिकल्लोलकपोलः ।
मुक्तारत्नविचित्रनिचोलः स्मररसमधुरविलोचन खेलः ॥२७॥
रत्नतिलकरुचिरञ्जितभालः स्निग्धचपलकुटिलालकजालः ।
कलितललिततरबहुविधमालः केलिकलारभसातिरसालः ॥२८
प्रमुदितवदनमनोहरहासः कम्बुकण्ठतटपदकविलासः ।

रत्यादि सूचक गुण क्रियादि प्रकटित हैं, उनकी महिमा समूह वेद के लिए भी दुर्बोध्य है, एवं परम प्रेमानन्द चमत्कार की परम सीमा में वह अवस्थित है ॥२३॥ शारदीय चन्द्र किरण माला से खचित सुप्लावित एव उद्वेलित रस सिन्धु की तरङ्ग माला से परिव्याप्त हैं, ऐसे वृन्दावन में प्रदोष काल के समय में उज्ज्वल वेशधारी किसी किशोर का प्रवेश हुआ ।२४॥ महाचमत्कार के स्वरूप विलास भूषादि के द्वारा अति अपूर्व मण्डित कृष्णचन्द्र प्रदोष के समय रासोत्सव करने के लिए वृन्दावन में प्रविष्ट होकर आनन्दित हुए ॥२५॥ आपकी रसमयी लीला है, आप कुवलय के (नीलपद्म के समान) समान नील वर्ण के हैं, एवं उनके गुण चरित्र सब कुछ ही सकल युवति को मुग्ध करनेवाले हैं । कुञ्चित केश कलाप चतुःषष्टि कला के अधीश्वर एवं निष्कलङ्क पूर्णचन्द्र हैं। उनके विपुल कटितट में पीतवसन शोभित है ॥२६॥ कर्णद्वय में मकराकृति कुण्डलद्वय दोदुल्यमान हैं, महाज्योति तरङ्ग मालामय सुन्दर कपोल गण्डदेश है । मुक्तादि रत्न खचित उतरीय वसन हैं, आप स्मर रस से मधुर लोचन द्वय को नृत्य करा रहे हैं ॥२७॥ रत्न एवं तिलक से कपाल रञ्जित हैं, कुञ्चितकेशदाम स्निग्ध चञ्चल एवं कुटिल है । सुन्दर सुन्दर अनेक

विरचितयुवतिविमोहनचूड़ श्चित्रमाल्यवृतवर्हापीड़ ॥२९॥
पीनोरसिलसदुरुमणिहार स्फुटदङ्गदकङ्कणरुचिधारः ।
सुभगनितम्ब रणमणिरसनः परिहितरासोचितवरवसनः॥३०

मणि मञ्जीर मञ्जुरुत चरणः प्रसृमर पादाङ्गद मणि किरणः ।
श्रवण विराजित रत्न वतंसकरधृत मणिमय मोहनवंशः ॥३१
राधानुस्मृति मुहुरुत्पुलकः सकलरसिकवरनागरतिलकः ।
प्रत्यङ्गाद्भुत सुषमासिन्धुः प्रतिपदवर्धिमदनरससिन्धुः ॥३२
प्रोद्वेलाद्भुतमधुरिमसिन्धुः प्रकटमहारसमयगुणसिन्धु ।
मत्तमतङ्गजलङ्घिमगमनः परमरसैकनिमज्जितभुवनः ।
काश्मीरागुरुचन्दनलिप्तः श्यामतनुर्मणिभूषणदीप्तः ॥३३
त्रिभङ्गी विन्यासस्थिततनुकदम्बद्रुमतले
यदा राधा नामाङ्कित मधुर सङ्केतमुरलीम् ।

प्रकारमाल्य धारण कर केलिकलारभस से अति रसमय हुए हैं ॥२८॥ महा आनन्दमय वदन में मनोहर हास्य है, कम्बु (रेखात्रययुक्त शङ्खवत) कण्ठदेश में पदक का विलास नृत्य हो रहा है' चूड़ा युवतियों का मुग्ध कर रहा है ॥२९॥ विशाल वक्ष में बहुविध मणिमय हार विलास हैं, अङ्गद, कङ्कण, की कान्तिमाला प्रकाशित है, सुन्दर नितम्ब में मणिमय रसना मधुरध्वनि कर रही है, एवं आप रासोचित अत्युत्तम वसन से शोभित हैं ॥३०॥ चरणों में मणिमय नूपुर की ध्वनि हो रही हैं, नूपुरों की मणि किरण चतुर्दिक में व्याप्त है कर्ण में रत्नकुण्डल, हाथ में मणिमय मोहनवंशो विराजित है ॥३१॥ श्रीराधा के स्मरण से अङ्ग में मुहुर्मुहु उच्च पुलक हो रहा है, आप सकल रसिकगण के श्रेष्ठ व नागर चूड़ामणि हैं' इनके प्रति अङ्ग में अद्भुत सुषमा सिन्धु है, एवं प्रतिक्षण में इनका मदन रस की वृद्धि होति रहती है ॥३२॥ इनसे अद्भुत माधुर्यसिन्धु उच्छलित हो रहा है आप प्रकट महारसमय गुणसिन्धु हैं, इनकी गतिभङ्गि मत्तमातङ्ग की भाँति अतिसुन्दर हैं, आप परमरस (शृङ्गार) के द्वारा सकल भुवन

निधाय श्रीबिम्बाधर वरपुटे नागर गुरु
र्जगौ गोप्योऽधावन्नभिकमभितह्यं विवशाः ॥३४॥
अथ नीप कल्पतरु मूलगतः कलित त्रिभङ्ग ललिताङ्गयुतः ।
अरुणाधरे निहितवेणुवरः कलमुज्जगौ स रसिकप्रवरः॥३५॥
श्रुत्वा माधवमुरलीनादं तत्क्षणमुज्झित गुरुजनवादम् ।
ध्वन्यभिमुखमनुधावितवत्यः प्रतिदिशमभिनवगोपयुवत्यः ॥३६॥
काश्चिद् व्यत्यस्ताम्बरभरणाः काञ्चननूपुरक युतचरणाः ।
अपरा अञ्जितैकछवरनयनाः का अपि परिहृतनिजपतिशयनाः ॥३७
स्नानमथोद्वर्त्तनमनुलेपं नीविनिबन्धनमार्जनलेपम् ।
कुर्वत्यऽतिजवात् ययुरपराः काश्चिदथार्धप्रसाधिताचिकुरा॥३८॥
काश्चिद् गुर्वादिषु भुञ्जानेष्वपि परिवेशं हित्वा याने ।
चक्रुर्मति मतिखण्डितलज्जाः केवल वांशिकसङ्गमसज्जाः ॥३९॥

को निमज्जित कर रहे हैं। आप कुङ्कुम, अगुरु, चन्दन द्वारा लिप्त देह हैं और मणिमय भूषणों से श्रीअङ्ग समुज्ज्वल हैं ॥३३॥ त्रिभङ्गि भङ्गिम रूप में खड़े होकर श्रीराधानाम का सकेत युक्त मुरली को सुन्दर विम्बाधर में रखकर नागरेन्द्र कृष्णने जब कलध्वनि की, तब ही गोपीगण विवश होकर लम्पटचूड़ामणि के निकट आने के लिए अभिसार किए थे ॥३४॥ अनन्तर आपने कदम्ब के नीचे जाकर त्रिभङ्ग सुन्दर भङ्गी का अङ्गीकार किया, अरुणवर्ण अधर पल्लव में वेणुवर को स्थापन कर वह रसिक चूडामणि कलध्वनि (अव्यक्त मधुर निनाद) करने लगे ॥३५॥ माधव की मुरलीध्वनि को सुनकर तत्क्षणात् गुरुजनगणों के परिवादादि को परिहार करके अभिनव गोप ललनागण उक्त ध्वनि को लक्ष्यकर दौड़ने लगीं ॥३६॥ किसी के वेशभूषादि विपर्यय हुआ, किसी ने एक चरण में नूपुर पहना, किसीने एक नेत्र में कज्ज्वल लागाया, और किसीने तो निज पति की शय्या को छोड़कर ही दौड़ी। ३७॥ अपरापर गोपीगण स्नान, उवटन, अनुलेपन, नीविबन्ध एवं गृह देह मार्जन लेपकादि करते करते उसका समाधान न करके ही प्रवल वेग से घर को छोड़ दिये, कोई तो केशप्रसाधन को असम्पूर्ण करके ही अभिसार किया ॥३८॥ किसीने गुरुजन को

काञ्चन हारग्रथने सक्ताः सूत्रकरा ययुरत्यनुरक्ताः ।
मुग्धा दुग्धावर्त्तना निरता ययुरपरा अपिहरिरसभरिताः ॥४०॥
लोकवेदविधिकृतमनुपेक्षा दूरदलितगृहदेहापेक्षाः ।
प्रेममहाग्रहगाढ़गृहीता हरिमभिसस्रुर्व्रजयुरवनिताः ॥४१॥
गण्डलोलमणिकुण्डलसुषमाः मुक्ताकवरभरविगलित कुसुमाः ।
विपुलनितम्बस्तनभरविकलास्तनुरुचि प्रकटीकृतबहुचपलाः ॥४२॥
उपरि विनिर्मित शतशत चन्द्रमा मध्यरचितचलहेमगिरीन्द्राः ।
भुविविहितस्थलपङ्कजवलनारेजुर्दिशि दिशि ता व्रजललनाः ॥४३॥
नूपुरकाञ्चिवलयघटानांझङ्कृत मुखरित सकलदिशानाम् ।
जङ्गमकनकलतायितवपुषां रेजेराजिः सा व्रजसुदृशाम् ॥४४॥

भोजन परोसने के समय ही परोसना छोड़ कर ही अभिसार कर दिया, अहो! वे सब ही महालज्जाशीला होने पर भी केवल बंशीधारी के साथ सङ्गम के लिए ही निर्णय कर लिए थे ॥३९॥ किसी ने तो माला निर्माण करते समय डोरी को हाथ में लेकर ही चल दिया, अन्यान्य गोपीगण दूध तपाने में रत होने पर भी मुग्ध एवं हरि रससे पूर्णचित्त होकर अभिसार कर दिये ॥४०॥ व्रजाङ्गनाओं ने लोकमर्यादा वेदमर्यादा का सम्यक् प्रकार से उल्लङ्घन किया था। उन्होंने देह गेहादि की अपेक्षा को भी विसर्जन कर दिया था केवल प्रेम रूप महाग्राह से आक्रान्त होकर उन्होंने हरिप्राप्ति के उद्देश्य से ही अभिसार किया ॥४१॥ उस समय उनके गण्डदेश स्थित चञ्चल मणि कुण्डल की सुषमा प्रसृत हुई, उन्मुक्त केश कलाप से कुसुम समूह विगलित होने लगे। वेसब विशाल नितम्ब व स्तन युगल के भार से विकल हो गये, एवं देह कान्ति के प्रकाश से जैसे अनेकानेक विद्युन्माला को ही प्रकट किए थे ॥४२॥ व्रजाङ्गनागण उपरि भाग में (मुख में) शत शत चन्द्रमा का निर्माण कर मध्यदेश में (छाती में) चञ्चलायमान सुवर्ण गिरीन्द्र (स्तन युगल) की रचना कर पृथिवी में चरण विन्यास से स्थल पद्म को प्रकाश कर विराजित थे ॥४३॥ नूपुर, काञ्ची, वलय समूह के झनत्कार से दिग् वलय मुखरित हो उठे थे और व्रज सुन्दरीगण गतिशील स्वर्णलता के सदृश प्रतिभात होकर यूथ यूथ में

युवतीषु या निजपति संभुक्ता दैवान्तर्गृहसयाता स्ताः ।
गोपै र्दृढतरपिहिते द्वारे प्रतिहत गतयः पेतुरगारे ॥४५॥
अशुभं पुरुषान्तर सङ्गकृतं कृत्वा विरहार्त्ता निहतम् ।
परममहामङ्गलसुनिदानं चक्रूर्मधुपति मधुरध्यानम् ॥४६॥
शुद्धमहारसचिद्घनदेहा हरिपरवहिरन्तरसकलेहाः ।
सपदि प्राप्ताः प्रेष्ठ पदान्तं ताश्च तदारुचिरास्तु नितान्तम् ॥४७॥
एवं व्रजवर युवतीवृन्दैः श्यामकिशोरमदान्धैः ।
हरिगतिरिन्दिरयापि न दृष्टाप्रान्त मदनरसमात्रनिविष्टा ॥४८॥

न लोक वेद व्यवहारमात्रं न गेह देह द्रविणात्मजादि ।
यत्राविदं स्ता न पयोऽपथो वा स कोऽपिजीयादिह कृष्णभावः

श्रीवृषभानो निष्कुट याता तद् दुहिता त्रिभुवन विख्याता
राधेत्यनुपम रसमयमहिमाशुद्ध महारति मधुरिमसीमा ॥५०॥

शोभित थे ॥४४॥ गोप युवतियों में से जो निज निज पति के द्वारा संभुक्ता रही, वह दैवात् घर में घुस गई थी' उस समय गोपों ने जोर से द्वार रुद्ध कर दिया इससे निरुद्ध गति होकर वह घर में गिर गई ॥४५॥ अन्य पुरुष के सङ्ग जनित अशुभ सकल हरि की आर्त्ति से विनष्ट हो जाने पर वह परम मङ्गल के सुन्दर निदान स्वरूप माधव का ध्यान करने में प्रवृत्त हो गई ॥४६ उस समय शुद्ध महारास चिद्घन देह को प्राप्त कर अन्तर बाहर सब कार्य में हरि परायण हो गई एवं सद्य ही प्रियतम के चरण के समीप में उपनीत होकर रुचिरता प्राप्त हुई, अर्थात् उनके निखिल मनोभिलाषा पूर्ण हो गईं ॥४७॥ श्यामल किशोर इस प्रकार प्रेम मदान्ध व्रज युवतीगण के साथ शोभित हुये। अहो श्रीहरि का भाव का दर्शन साक्षात लक्ष्मी ने भी नहीं किया अथच केवल कामरस निविष्ट गोपीगणों ने उसको प्राप्त किया ॥४८॥ जिसभाव से वश होकर गोपीगण लोक व्यवहार को भूल ही गई थीं, जिस भाव ने गेह देह धन पुत्रादि को विस्मृत करा दिया, जिससे उनसब ने सुपथ विपथ कुछ भी नहीं जाना है उस अनिर्वचनीय कृष्ण भाव की जय हो, अमरत्व को प्राप्त करे ॥४९॥ अतुलनीय

स्व स्व विभव सुचमत्कृततनुभिः पुरुषोत्तम शक्तिभिरमिताभिः ।
दूरतरादपि कृतदास्याशा सकल परमसुखकृत परिहासा ॥५१
आशैशवमतिमुग्धप्राया श्यामिकादि कलनाकुलकाया ।
सहज महाद्भुत हर्षनुरागा संव्यवहारमात्र सविरागा ॥५२॥
स्वप्नेक्षित रमणात्मसमाधिः प्रलपित संजनितात्युपलब्धिः ।
क्षणमति कम्पा क्षणमति पुलका जड़वत् क्षणमाश्रितसख्यका॥५३॥
विलसति नवघन आगतमूर्च्छा सभय सभयवीक्षितशिखिपिच्छा ।
क्षणमत्यर्त्त्या सुस्वर रुदिता क्षणमपि बहुशः क्षितितललुठिता ॥५४॥
क्षणमुत् सृजति सकलाभरणं क्षणमति गृह्णत्यालीचरणम् ।
क्षण मभिधाय यामि यमुनामितिनिगदति वाच्योऽसौ मम नम इति॥५५॥

रसमय महिम विशिष्टा, शुद्ध महारति एवं माधुरी की सीमा त्रिभुवन प्रसिद्धा श्रीवृषभानु नन्दिनी राधा अपने उपवन में पधार चुकी हैं ॥५०॥ निज निज वैभव ऐश्वर्य द्वारा चमत्कार कारि देह धारिणी पुरुषोत्तम के निखिल शक्तिगण दूरतर प्रदेश से हीदास्य रस की आशा करते हैं, अहो ! उन्होंने इस भाव में लुब्ध होकर परम सुख राशि का परिहास किया ॥५१॥ श्रीराधा शैशव से मुग्ध स्वभाव की थी श्याम वस्तु को देखकर ही उनके देह व्याकुल हो जाता था, श्रीहरि के प्रति साहजिक महाद्भुत अनुराग एवं व्यवहारिक वस्तु के प्रति सम्यक् वैराग्य अनासक्ति उनकी थी ॥५२॥ आपने स्वप्न में रमण श्रीकृष्ण के साथ निज मिलन स्वभाव एवं समाधि (नियम) को दर्शन किया प्रलाप से अतिशय उपलब्धि प्रकट हुई, छन में अतिकम्प क्षण में अतिपुलक कभी तो जड़ के समान सखी को पकड़ कर रह गई ॥५३॥ नवीन जलधर को देखकर मूर्च्छित होती हैं, भीत सन्त्रस्त होकर मयूरपुच्छ को देखती है, क्षण में ही अतिशय आर्ति से उच्चैःस्वर से रोती रहती हैं, क्षण के वाद ही पृथ्वी में गिरकर लौट लगाती रहती हैं ॥५४॥ क्षण क्षण में आभरणों को खोलकर फेंक देती हैं, छन में सखियों के चरण पकड़ती है, क्षण क्षण में मैं यमुना को जारही हूँ, कहकर, उनको मेरा नमस्कार कहना, यह कहती हैं ॥५५॥

क्षणमुल्लसिता सहसोरुहसिता विततभुजच्छायाश्लेषरता ।
क्षण मभिदधतिकृतकाकुनति धृष्टोपालि न लज्जय मेति ॥५६॥
माधव नाम रूप गुण गानैश्चित्रपदादिष्वाकृतिलिखनैः ।
प्रतिमुहुरपि चाश्वासवचोभिः कथमपि यापितसमयालीभिः ॥५७॥
साश्रु तिगत हरि मुरली सुकलाविकलाऽधावदुपेक्षित सकला ।
श्याम मिलन रस संभ्रम वलिता प्रति मुहुरुद्यत् पुलकैर्निचिता ॥५८॥
रस गरिमोज्ज्वल गौरवरक्षाकार विरचित बहुतर शिक्षा ।
वारितवत्यपि मन्मथविवशामालिस्तां धृतपाणिः सहसा ॥५९॥
तासु सकल गोकुल वनितासु प्रणय महासंभ्रम मिलितासु ।
प्रेक्षा न जीवौषध निज कान्ता प्रायहरिर्विरहा तुलचिन्तां ॥६०॥

श्रुत्वापि वेणुनिनद स्वसखीजनेन
सम्मान रक्षण कृते बहुदत्त शिक्षा ।

छन छन में उल्लसित हो उठती है, सहसा जोर से हँस पड़ती हैं, अपनी छाया को, भुजाओं को बढ़ा कर दृढ़तर आलिङ्गन करती हैं क्षण क्षण में काकुवाद प्रणति कर कहती है, हे धृष्ट ! सखीजन के समक्ष में मुझे लज्जित न करो ।।५६।। माधव के नाम, रूप एव गुण गान से चित्रपटादि में उनकी आकृति अङ्कन में प्रति मुहुर्त्त में सखी गण के द्वारा प्रदत्त आश्वास वाणी को सुनकर ही काल यापन करती रहती है ।।५७।। श्रीहरि की मुरली की कलध्वनि कर्णरन्ध्र में प्रविष्ट होते ही अधीर होकर सब वाधा की उपेक्षा करके ही आपने अभिसार किया, श्याम के साथ मिलन रस से सम्भ्रम युक्त होकर प्रति मुहूर्त्त में ही उनके अङ्ग में पुलकावलि विकसित हो रही थीं ।।५८।। रस का गुरुत्व एवं स्वकीय उज्ज्वल कुलगौरव रक्षा के लिए सखियों ने उनको अनेक प्रकार शिक्षा भी दी, किन्तु सहसा ही उनको अभिसार में प्रवृत्त देखकर सखिने उस काम विह्वल राधा का हात पकड़ लिया ।।५९।। यहाँ पर प्रणय सम्भ्रम से मिलित गोपी समाज में निज जीवातु रूपा कान्ता को न देखकर श्रीहरि विरह से अतुलनीय चिन्तान्वित हो गये ।।६०।। वेणुध्वनि को सुनकर भी

राधासमागतवती न यदा तदेक
प्राणस्तदा हरिरभूद्गुरुदुःखचिन्तः ॥६१॥

दर्शित लोकवेद बहुभीतिः प्रिय विनिर्वर्त्तित युवतीविततिः ।
समवददथनुराग रसान्धा हरिपद कृत दृढ़जीव निबन्धा ॥६२॥
विषमिव सकल विषय मपहाय त्वत्पदमाश्रितमतुलसुखाय ।
प्रेष्ठतमाखिल मर्म कृपाणीं मावद मावद निष्ठुरवाणीं ॥६३॥
सकलेन्द्रिय मनसामनिवृत्तिः प्रिय ! भवतैक हृताखिल वृत्तिः ।
कोन्विह लोकः कः परलोकः क्व तदा स्मरणं क्वनु वा करणम् ॥६४
यद्यनिवृत्ति प्रविशति लोकः परयासह्य नरकमधिकरौकम् ।
कोऽपि तदपि किमु तव चरणाशां प्रत्यपि कुरुतेहन्त जिहासाम् ॥६५॥
तच्चरणाम्बुज मकरन्दाशा यद्हृदि समभूत् सहज बिलासा ।
दर्शय परम महामय लोभानहहस्वात्मनि भवति विशोभा ॥६६॥

निज सम्मान रक्षा के लिए सखीजन के द्वारा उपदेश प्राप्त करके भी जब श्रीराधा सङ्केत स्थल में नहीं आई, तब राधागत प्राण श्रीहरि अतिशय दुःख से चिन्तित हो गये ।।६१।। प्रियतम श्रीकृष्ण ने लोक वेद मर्यादा लङ्घन से उत्पन्न भय का प्रदर्शन किया, और उनके साथ मिलित होने को मना कर दिया तब अनुराग से अन्ध प्राय, एवं श्रीहरि चरणों में निविड़ रूप से प्राण समर्पण कारिणी युवतीगण श्रीकृष्ण को कहने लगीं ।।६२।। हे प्रेष्ठतम ! हमने सब विषयों को विष के समान त्यागकर निरुपम सुख के लिए तुम्हारे चरणाश्रय किया है, इस समय मर्म घातक निष्ठुर वाक्य मत बोलो ।।६३।। हे प्रिय हमारे इन्द्रिय एवं मन की निवृत्ति किसी से नहीं होती है, कारण तुमने सबके मन को हरण कर लिया है। हमारे इहलोक और परलोक [illegible] है, तब कहाँ किस कास्मरण, और वहाँ किसका करण, अर्थात् इन्द्रियादि की चेष्टा कहाँ होगी ।।६४।। यदि कोई व्यक्ति परम असह्य नरक समुह में निवृत्ति रहित होकर प्रवेश करता है, हाय ! तथापि [illegible] तुम्हारे चरण प्राप्ति की आशा को छोड़ सकेगा ।।६५।। तुम्हारे चरण पद्म मधु प्राप्ति की आशा स्वाभाविक रूपसे हमारे हृदय

पति सुत गेह स्वजन धनाद्यं त्यक्तं वान्ता वदखिलमवद्यम् ।
पुनरपि दुःसहमपि तत् स्मरणं तव यदि न कृपावरमिह मरणम् ॥६७॥
त्वत्पद पङ्कज रजसा धन्ये त्यक्त्वा तनुमिह वृन्दारण्ये ।
प्राप्स्याम स्त्वां ध्रुवमभिरामं त्यज दुरवग्रहनागर कामम् ॥६८॥
प्रेमोत्कण्ठच सगद् गदमित्थं व्रजतरुणीमुख चन्द्रसमुत्थम् ।
पीत्वा वचनसुधारससारं राधापतिरिदमवदद्दुदारम् ॥६९॥

चन्द्रावली प्रभृति सर्व विदग्ध गोपी
वृन्देऽपिसंमिलितवत्यति मन्मथान्धे ।
श्रीराधिका विरहदीन उपेक्ष्य पूर्वम्
पश्चादनन्य विषयान्ययुनक् प्रियार्थे ॥७०॥

अति निर्भरतर मद्भावावतिर्नाहमुपेक्षेकथमपिभवतीः ।

मेंविराजित है, अब तुम महाभय एवं लोभ दिखला रहे हो । अहो ! तुम्हारे निज, स्वभाव में यह आचरण बहुत ही विसदृश मालूम पड़ रहा है ॥६६॥ हमने पति पुत्र गृह स्वजन धनादि घृणित वस्तु को वान्तवत् (वमन के समान) ही त्याग किया है, पुनर्वार उसकी बातों का स्मरण करने पर भी दुःख होता है । यदि तुम्हारी कृपा नहीं मिलती तब हमारे लिए मृत्यु ही श्रेयस्कर है ॥६७॥ तुम्हारे चरण रज से धन्य इस वृन्दवन में देहत्याग करके निश्चय ही अभिराम रमण तुमको हम सब प्राप्त करेंगे । हे नागर हे दुरवग्रह ! 'मनोरथ परिपूरण में प्रतिबन्ध दाता' तुम इसको छोड़ो ॥६८॥ व्रजाङ्गना के मुखचन्द्र निर्गलित इस प्रकार प्रेमोत्कण्ठा जनित गद्‌गद् वाणी रूप मनोरम सुधारस निर्यास को पानकर श्रीराधा नायक कहने लगे ॥६९॥ चन्द्रावली प्रभृति सर्व विदग्ध गोपीवृन्द सम्मिलित होने पर भी श्रीराधिका के विरह कामरस से अतिशय अन्ध दीनचित्त श्रीकृष्ण ने पहले उन सब की उपेक्षा की पीछे उन सब को अनन्य जानकर प्रियतमा के लिए विनियोग किया॥७०॥
तुम सब ने मेरे साथ दृढ़तम प्रेम किया है, अतएव मैं किसी प्रकार से

किन्तु विना मम जीवन राधां कृन्तति किमपि च नान्तर बाधाम् ॥७१॥
तद्दयिता रचयत बहुयत्नं सा मम कण्ठविभूषणरत्नम् ।
मिलति यथा न चिरेण भवत्यः साधु तथा विदधन्त्वतिमत्यः ॥७२॥
अथ स विचार्य व्रजवनिताभिः कापिनिपुणमतिमुदिताभिः ।
प्रहिता द्रुतमुपवन गत राधां समुपेत्याह बलत्स्मरबाधाम् ॥७३॥
श्रीवृषभानु भवन मणिमञ्जरि राधे ! जन नयनामृत लहरि !
क्वापि न लोके क्वापि तुला ते व्रजजन भाग्यात् परमिह जाते ॥७४॥
अयि मयि कृपयाऽपाङ्ग मुदञ्चय सेश्वर विश्वं मद्वशतां नय ।
स्नेहावेश गलज्जल नयने ! क्षणमवधानं कुरु ममवचने ॥७५॥
परमरसे तव यदपि निमग्नं क्वचिदपि भवति मनो न हि लग्नम् ।
तदपि महाकरुणार्द्र प्रकृते ! श्रवणं देहि मनाङ्ममगदिते। ॥७६॥

भी तुम सब की उपेक्षा नहीं कर सकता हूँ । किन्तु मेरा जीवन स्वरूप राधा को छोड़कर मेरी हृदय पीड़ा की शान्ति किसी प्रकार से नहीं हो रही है ॥७१॥ अतएव ! हे दयितागण ! तुम सब महामति हो, बहुविध प्रयत्न करो, जिस से अचिरकाल में ही वह राधा मेरे कण्ठ की भूषणमणि हो जाय ॥७२॥ अनन्तर श्रीकृष्ण ने अति आनन्दित व्रज बालागण के साथ परामर्श करके एक सुनिपुणा गोपी को दूती बनाकर राधा के पास भेज दिया, वह गोपी द्रुतगति से उपवन स्थित राधा के समीप में जाकर, उनको काम पीड़ा से अधीरा देखकर कहने लगी ॥७३॥ हे वृषभानु राज भवन की मणि मञ्जरि ! हे श्रीराधे ! हे जनगण नयनामृत लहरि ! चतुर्दश भुवन में कहीं पर तुम्हारी उपमा नहीं है किन्तु व्रजगण के भाग्य से ही तुमने यहाँपर जन्म लिया है ॥७४॥ अयि राधे ! कृपाकरके मेरे प्रति एकवार अपाङ्ग निक्षेप करो । एवं लोक पालगण के साथ समग्र विश्व को बाध्य करो ! स्नेहावेश से तुम्हारे नयन से अश्रुधारा विगलित हो रही है, हे राधे । क्षणकाल के लिए मेरावाक्य में मनोनिवेश करो ॥७५॥ हे परम रस रूपे । यद्यपि तुम्हारा मन कहीं पर नहींलग रहा है, किसी परम रस में निमज्जित नहीं होता है तथापि हे महा करुण द्रंचित्ते !

एकः श्यामलदिव्यकिशोरः श्रीशप्रमुख मनोमणिचोरः ।
अस्ति व्रजवृन्दावन सेवी तं लभते कापि न देवी ॥७७॥
कलादिक वरतरुणीवृन्दैः सतत विमृग्यः कृतनिरबन्धैः ।
स तव पदाम्बुज परिमल लुब्धः षट्पदइव बिभ्राम्यतिमुग्धः ॥७८॥
राधे ! तस्य तु तत्त्वरहस्यं त्वच्छ्रुति मूलेशंस्यमवश्यम् ।
यत् केनापि कदापि मनागपि ना दृश्यत पराभवदृशापि ॥७९॥
केवल काम रसात्मक एष केवल मधुरकिशोरक वेषः ।
केवल गोप युवति रति तृष्णः परमधुरिम्णा नाम्ना कृष्णः ॥८०॥
कामपि गोपीमपि कामयते न खलु रमाद्यारमणीर्मनुते ।
गोकुल मखिल मसौ दिन रजनी विचिनोति क्वनु का नव रमणी ॥८१॥
बलतश्छलतोऽन्यैरपि योगैः साधितगोपबधूसंभोगैः ।
निरवधि कामाम्भोधेः पारं गच्छन्नस्ति कश्च एवारम् ॥८२॥

एकवार मेरी बात को सुनो ॥७६॥ लक्ष्मी पति प्रभृति सब के मनो मणि चोर एक श्यामल दिव्य किशोर हैं, आप व्रज विपिन का ही सेवक हैं कोई भी देवी उनको प्राप्त करने में समर्थ नहीं हैं ॥७७॥ लक्ष्मी प्रभृति महातरुणी वृन्द, निर्बन्ध के साथ सतत उनका सङ्ग को ढुँढ़ती रहती हैं, किन्तु प्राप्त नहीं होते है। वह किशोर मणि तुम्हारे पाद पद्म के परिमल लुब्ध भ्रमर की भाँति अति मुग्धचित्त से इधर उधर भ्रमण कर रहें हैं, अथवा विभ्रम ग्रस्त हैं ॥७८॥ हे राधे ! उनका तत्व तुम्हारे कर्ण मूल में अवश्य ही निवेदनीय है, अहो ! परभाव दर्शनकारी कैवल्य अथवा मुक्ति धामनिरक्षक, अत्युत्कृष्ट भाव पर्यवेक्षक कोई भी महाजन कभी बिन्दु मात्र भी उसतत्व का अनुभव नहीं कर पाये हैं ॥७९॥ आप केवल काम रस स्वभाव, केवल मधुर किशोर वेश, एवं केवल गोपीगण की रति तृष्ण रति लम्पट हैं उनका परम मधुर नाम ही श्रीकृष्ण हैं ॥८०॥ आप जिस किसी गोपी को चाहते हैं, किन्तु लक्ष्मी प्रभृति सुन्दरीगण को कभी भी मन में स्थान ही नहीं देते हैं दिनरात समग्र गोकुल में घुमघुम कर देखते हैं, कहाँ पर कौन नव युवति है ॥८१॥
बल से और छल से एवं अन्यान्य उपायों से कौन व्यक्ति ऐसा है जो

तत्र तु स्निग्धजनानुग्रहतस्तस्या करान्तरमपि दधतः ।
प्राप्य रहसि नव तरुणी निकटं तन्निजरूपमुदैनिप्रकटम् ॥८३॥
किं बहुनागरीते स्तस्याप्यैक्षिशिशुत्वानुकृतेः ।
गोप्योत्सङ्गेऽधररसलौल्यं कुचकोररकमनु करचाञ्चलयम् ॥८४॥
स हि नव किशोरीदर्शं व्रजवीथ्यादिष्वकृतविमर्शम् ।
लुञ्चित कञ्चुक कुचयुगदः श्लिष्यति चुम्बतिसहसामत्तः ॥८५॥
सुतयामिलति मिलत्यपि बध्वामिलतिभगिन्याप्यव्यपथिरुद्धा ।
तदपि महामोहन वदनेक्षा स्थगिततस्थू बल्लवमुख्याः ॥८६॥
काश्चिद् वशयति कामकलाभिः का अपि नृत्तगीत विद्याभिः
काश्चन तरलीकुरुते मुरली वादनखुरलीभिर्वनमाली ॥८७॥

गोप वधूगण के साथ निरन्तर सम्भोग क्रीड़ा करके काम समुद्र का पार में यथेच्छगमन करने में समर्थ हुआ है ? ॥८२॥ स्निग्ध सखीजन की कृपा प्राप्त करने के लिए, एवं कभी तो अन्य रूप धारण कर निर्जन में नव तरुणी के समक्ष में आकर निज रूप प्रकट करने के लिए भी इन को देखा गया है ॥८३॥ अधिक क्या कहें ? शिशुत्व का अनुकरण कर (अर्थात् स्वभाव में किशोर होकर भी वयस में शिशु रूप धारण कर) बहुविध नागर कलावित् कृष्ण गोपीजन गण के क्रोड़देश में अवस्थान करते हैं, एवं उनके अधर सुधापान के लिए चाञ्चल्य प्रकट करते हैं। एवं कुच कोरक स्पर्श के लिए भी हात को चञ्चल करते हैं ॥८४॥ व्रज के पथ में नव किशोरी को देखकर ही कुछ भी न सोचकर कञ्चुक अपसारण प्रभृति करते रहते हैं, सहसा मत्त होकर आलिङ्गन चुम्बनादि करते रहते हैं ॥८५॥ किसी की कन्या के साथ बधू के साथ भगिनी के साथ मिलन लीला करते रहते हैं श्रेष्ठ. गोपीगण इनका पथरोध करने पर भी इनका महामोहन वदन को देखकर सब मुग्ध हो जाते हैं ॥८६॥ वनमाली किसी को काम कलादि के द्वारा किसी को नृत्यगीतादि के द्वारा वशीभूत करते हैं, और किसी को मुरलीवादन रूप शराघात से चञ्चलायित करते हैं ॥८७॥

काश्चन तत्पति वेशविनोदैः काश्चिद्ग्रहभीत्याद्यपनोदैः ।
काश्चन दूतिकया बहुमानैः काश्चिद् वंशीधारण धरणैः ॥८८॥
काश्चित् स्वयमनुनयनैर्यन्याद्यु त जितास्तत् पतित स्त्वन्याः ।
आकर्षति काश्चन मन्त्राद्यैः काश्चन चीरहार हरणाद्यैः ॥८९॥
वनभूमि पुष्पावचयन सक्ता काश्चन चौर्य्यारोपाद् भुक्ताः ।
अन्याश्चित्रेक्षण कुतुकेन भीषण जन्तुरूप भजनेन ॥९०॥
देवनटी रूपाचरणेन मोहयतीन्द्र जाल रचनेन ।
अन्या स नयन् यमुनापारं रतिमेवातरमात्तोदारम् ॥९१॥
गोकुल बधूटि कया न कया सङ्गतिरस्यबभूव ह ।
उन्मद मदन रसैक प्रकृते स्तदपि मनोऽस्य न निर्वृतिमयते ॥९२॥
स कदाचिन्नव वृन्दाविपिनं प्राविशेदेकः स्मररसः सदनम् ।
क्वापि कदम्बतले स्मरखिन्नः सुप्तस्तत् प्रशमन निर्विण्णः। ।९३॥

किसी किसी रमणी को पतिवेशधारण कर आनन्द देते हैं, किसी का ग्रहभय विदूरित करते हैं, किसी को दूती द्वारा बान मान प्रदान करते हैं, एवंअपरापर गोपीगण को वंशी वादन द्वारा वशीभूत करते हैं ॥८८॥ किसी को अनुनय करके, किसी को द्यु त क्रीड़ा से किसी को मन्त्रादि के द्वारा वश कर, किसी के वस्त्र हार प्रभृति की चोरी करके सम्भोग करते हैं ।।८९।। बन प्रदेश में किसी गोपी को पुष्प चयन में आसक्त देख कर कृष्ण उसको चोर अपवाद देकर और किसी को विचित्र जन्तु दिखलाकर भय उत्पन्न करके सम्भोग करते हैं ॥९०॥ कभी तो देव नटी का, रूप धारण करइन्द्रजाल विद्या से किसी को मुग्ध करते हैं, किसी को यमुना पार करने के लिए नाव और नाविक बनकर किराया भाड़ा माँगते हैं ॥९१॥ किस गोकुल बाला के साथ कृष्ण का सङ्गम नहीं हुआ है ? किन्तु उन्मद मदन रस स्वभाव कृष्ण का मन परम शान्ति प्राप्ति नहीं किया है ॥९२॥ किसी एक समय मेंश्रीकृष्ण अकेला ही स्मररस मन्दिर नव वृन्दावन में प्रवेश किये थे, कामशर से खेदान्वित एवं उसका प्रशमन के लिए निर्वेद युक्त होकर किसी कदम के नीचे सो गयेथे ॥९३

स्वप्ने दर्शनमस्य त्वमगा लीलाखेल परादभुतम्सदा ।
किमपि च लज्जानत वदना सा गदित वतीमधुरंसविलासा ॥९४
किं कथये त्वां जीवितनाथ ! राधात्वत् प्रेमैव ननाथ ।
त्वन्तु व्रजयुवतिभि विहरसि मां निजकान्तां नैव स्मरसि ॥९५॥
इत्याकर्ण्य परम रससारं त्वद् वचनामृतमसमोदारम् ।
यावत् पुरुद न् पदयोः पतित तावज्जागरितोभुविलुठति ॥९६॥
तदवधि परमाविष्टः स युवा व्रजमथ वृन्दा न मन्यद्वा ।
राधाराधेत्यविरत जापः प्राटति राधाध्याग्युरुतापः ॥९७॥
प्रथमोद्देशं तव सुसखीतः श्रु त्वा तद्भाव च प्रतीतः, ।
अन्योपायं मिलनमपश्यन् वेणुरवै स्त्वाह्वयदति हृष्यन् ॥९८॥
तास्तु महामोहनमुरलीध्वनि माकर्ण्यैव लोक निगमाध्वनि ।
दृढ़तर हेयधियो व्रजवनिता आयपुरस्यान्तिकमपि न मताः ॥९९

लीला विलास परायण, अद्भुत रसदायिक तुमने उनके स्वप्नके मध्य में उदित होकर लज्जा नम्रवदन और विलास भङ्गी से सुमधुर स्वर से उनको कहा था ॥९४॥ हे प्राणनाथ ! मैं और क्या कहूँगी ? राधा तुम्हारे पास प्रेमभिक्षा कर रही है। तुम व्रज युवतिगण के साथ विलास कर रहे हो, निज प्रेयसी मुझ को स्मरण ही नहीं करते हो ।९५॥ परम रस निर्यास रूप तुम्हारे इस अतुलनीय मनोहर वाक्यामृत को श्रवण द्वारा पानकरके जब श्रीकृष्ण जोर जोर से रो रो कर तुम्हारे पैर में गिर गये थे, उसी समय नींद टूट जाने पर जागकर भूमि में लौट लगाने लग गए॥९६॥ उसी समय से ही वह युवा किशोर परमाविष्ट होकर व्रज में वृन्दावन में एवं अन्यत्र 'राधा राधा' नाम अविरत जप करते करते घूम रहें हैं ॥९७॥ तुम्हारी किसी प्राण प्रिया सखी के समीप में तुम्हारा प्रथमोद्देश प्राप्त कर एवं भाव को अनुभव कर आपने निश्चय किया कि अन्य उपाय से मिलन होना असम्भव हैं, अतएव आनन्द चित्त से वेणु ध्वनि से ही तुम्हें बुलाने का प्रयत्न वह कर रहें हैं ॥९८॥ वह परम मोहन की मुरली ध्वनि को सुनकर ही लोक मार्ग में और

अपि न कटाक्ष निरीक्षण मासु त्वत् प्रणयी कुरुनेऽनुरतासु ।
अनिशयैवाद्भुत रसभावं खिन्न स्त्वत् पदनूपुररावम् ॥१००
पश्यन्नपि स न पश्यति किञ्चित् शृण्वन्नपि न शृणोति स किञ्चित्
त्वामनु चिन्तयते व्रजनाथः सन्तत विहित त्वद्गुणगाथः ॥१०१
क्वासि प्रेयसि ! हा हा राधे ! मय्यनु कम्पां कुरुपुरुबाधे ।
स्मृत्वा मामुपयाहि त्वरित वृन्दाविपिनं कुरुसुखभरितम् ॥१०२
अथवा सहज सुख वत्सल हृदये नायास्यसि कथमनुगत सदये ।
तिष्ठसि कुञ्ज क्वापिनिलीना रीतिरियं तव सुरस धुरीणा १०३
एवं प्रलपति बहुधा कृष्णस्त्वत् सङ्गम रसमात्र सतृष्णः ।
त्वामुपनीय ध्यानात् पुरतः, स भवति रसमयचेष्टातिरतः ॥१०४

वेद मार्ग में दृढ़तर हेय बुद्धि स्थापन कर व्रजबालागण उनके निकट आगई हैं, किन्तु श्रीकृष्ण ने तो उन सब को कुछ भी आदर नहीं किया ॥९९॥ तुम्हारे प्रणयी ने उस अनुरक्त सबलागण के प्रति कटाक्षपात भी नहीं किया। कारण वह अद्भुत रसभाव जनक तुम्हारे पद नूपुर की ध्वनि को न सुनकर खिन्न हुआ है ॥१००॥ आप कुछ देखकर भी नहीं देख रहे हैं, सुनकर भी नहीं सुन रहे हैं अर्थात् उस विषयों में मनोनिवेश नहीं करते हैं, वह व्रजनाथ केवल आपकी चिन्ता में मग्न हैं, और निरन्तर आपकी गुणगाथा का कीर्त्तन करते रहते हैं ॥१०१॥ हे प्रेयसि ! राधे ! तुम कहाँ हो ? तुम्हारी बहुत बाधा विपत्ति हैं, मैं जानता हूँ, तथापि कृपाकरो ! मुझे स्मरण कर एकबार शीघ्र वृन्दावन में आकर सबको सुख पूर्ण करो ॥१०२॥ अथवा तुम तो सदा ही स्निग्ध हृदय के हो, तुम तो माहश्य अनुगत जन के प्रति सदा ही सदय हो, व्रज विपिन में क्यों नहीं आओगी ? मैं समझ गया हूँ, तुम किसी कुञ्ज में छिपकर हो, तुम्हारी रीति सुन्दर तो है ही, रसमयी भी है ॥१०३॥ इस प्रकार तुम्हारे सहित सङ्गम रस में तृष्णाशील कृष्णचन्द्र बहुशः प्रलाप करते रहते हैं, ध्यान से तुम्हें सम्मुखीन कर आप रसमय चेष्टा में डूबे हुये हैं ॥१०४॥

चन्द्रावल्याद्यखिलमनोज्ञ व्रजवर रामा अपि स रसज्ञः ।
कृतचाटूक्तीः पश्यति न दृशा श्वसिति परं तव रतिरससुतृषा ॥१०५
नान्य तरुण्या वार्त्ताः कुरुते नान्य दत्तं पिबति न भुङ्क्ते ।
अन्या स्पर्शन दर्शन विरुचि स्त्वत्परतायामास्ते स शुचिः ॥१०६
विलपत्यति करुणं तव बन्धु र्धृतबाष्पौघो युवति मुखेन्दुः ।
स्थिरचर सत्त्वान्यपि चक्रन्दु र्वृन्दा विपिनमश्रुजल सिन्धुः ॥१०७
शोषं नेष्यति हरिवपुरुष्मा तववृन्द वनमथरुचिराश्मा ।
केलिगिरि स्ते द्रवतां यायान् प्लावितमखिलं बाष्पैर्भूयात् ॥१०८
सकलं श्रीमद् वृन्दाविपिनं सकलं गोकुलमपि च व्यसनं ।
परम दुरन्तमद्य समुपैति सकल प्राणधने परिषीदति ॥१०९
तदुरुनितम्बे न कुरु विलम्बं चल सखि ! कृतमत् पाण्यवलम्बम् ।

चन्द्रावली प्रभृति निखिल मनोज्ञ युवतिगण अनेकानेक प्रिय वचन कहनेपर भी रसज्ञ कृष्ण उनसब को आँख उठाकर भी नहीं देख रहें हैं। बरं तुम्हारे रति पिपासु हो कर लम्बी श्वास ले रहे हैं ॥१०५॥ अन्य किसी भी रमणी की बात नहीं सुनते हैं दूसरे से दी हुई भोजन पान सामग्री का ग्रहण नहीं कर रहे हैं। अन्यान्य गोपीयों के दर्शन, स्पर्शन, मे उनकी बड़ी अरुचि हो गई है, किन्तु तुम्हारे प्रति एकान्त निष्ठा को प्रकटकर परम पवित्र हो गये हैं ॥१०६॥ तुम्हारे बन्धु, अति करुण स्वर से विलाप कर रहे हैं, हे युवति राधे ! उनका मुख बाष्प धारा से नहा रहा है, स्थावर, जङ्गम, प्राणी निचयों के रोदन से वृन्दावन आँसूयों का सागर बन गया है ॥१०७॥ श्रीहरि का देह ताप सब वृन्दावन को सुखा देगा, और मनोज्ञ प्रस्तर खण्ड शोभित तुम्हारे केली गिरिगोवर्द्धन पर्वत भी पिघल जायेगा, अथवा सब व्रजमण्डल आँसुयों की बाढ़ के चपेट में आ जायेगा ॥१०८॥ सबके प्राणधन श्रीकृष्ण विषण्ण होने पर आज समग्र वृन्दावन समग्र गोकुल परम दुरन्त विपदा क्रान्त है ॥१०९॥ अतएव हे गुरु नितम्बिनि और देरी मत करो हे सखी मेरा हात पकड़ कर अभी चलो तुम्हारी गति भङ्गी को देखकर मदकल

मदकल कादम्बक निकुरम्बं तव गति भङ्ग्या भजतु विड़म्बम् ॥११०
अथदुर्धरतरमन्मथ बाधा किमपि गदितुमशकन्नहि राधा ।
तद्दयितालि बहुरस वलिता गिरमति ललिता मवदल्ल लता ॥१११
चल सुन्दरि ! किं बहुवचनेन वयमति तृप्ताः कृष्णगुणेन ।
यैरनुभूतं तस्य न चरितं तच्छ्रवणं कुरु तद्गुणभरितम् ॥११२
वक्रिमशालि श्यामल वपुषः काऽऽस्था ऋजुशुचितायांमनसः ।
कृत्रिम एव प्रेमविकार स्तस्यमृषा वा त्वद् व्याहारः ॥११३
पश्य दूति ! बहु वल्लभ एष व्रज पुरतः तरुणी मोहनवेशः ।
वेणु ध्वनि हृतगोपावृन्दः कथमिह सख्या मम सुखगन्धः ॥११४
मनुते यदि दयिता गणमुख्यां स मम सखीं निज परमाभिख्याम् ।
तत् कथमादौ न तया मिलितः प्रामानुज्ञोऽन्याभिर्न युतः ॥११५

कलहँस निचय विड़म्बना को प्राप्त करके लज्जित हो जाय ॥११०॥ अनन्तर दुःसहतर मन्मथ पीड़ा से आक्रान्त होकर श्रीराधा कुछ भी कह नहीं सकी । तब उनकी प्रिय सखी, प्रिय सहचरी बहुरसमयी ललिता अति ललितमनोज्ञ वाक्य से बोली ॥१११॥ हे सुन्दरी !अभी ही इस स्थान को छोड़ो । बात करने की आवश्यकता क्या है ? हम कृष्ण गुण से अच्छी तरह सुतृप्त हैं, उनके चरित्र का अनुभव जिनका नहीं हैं, उनके कान में ही कृष्ण गुण गान कर बताओ ॥११२॥ त्रिभङ्ग भङ्गिम श्यामल सुन्दर के मन की सरलता और पवित्रता में क्या विश्वास है ? उनका प्रेम विकार कृत्रिम हो सकता है, अथवा तुम्हारा कहना झूट है ॥११३॥ देखो दूति ! कृष्ण बहु वल्लभ हैं, उनका वेश भी गोकुल युवतियों को मुग्ध करनेवाला है, उन्होंने वेणु ध्वनि से तो गोपीगण को ही आकर्षण किया है । इससे मेरी सखी कैसी सुखी हो सकती है ॥११४॥ यदि मेरी सखी को प्रियागण मुख्या मानते हैं, परमशाभा विधायिनी, कीर्तिदायिनी मानते हैं, तब पहले इनके साथ क्यों नहीं मिला, अथवा इनका आदेश क्यों नहीं लिया अन्य गोपी सङ्ग करने के लिए ॥११५॥

तदलमलं कपटैक परेण प्रकटित मिथ्याप्रेम भरेण ।
तेन दिनद्वयमेकी भवता पुनरथ परमौदास्यं भजताः ॥११६
किञ्चास्माकं कण्ठ गतेषु प्राणेष्वन्यां ब्रजवरतनुषु ।
राधाभर्त्ता कथमिव शयनं नेष्यति धन्यामपि कृतकरुणम् ॥११७
तत् लक्ष्मीपति मोहन्यपि का व्रजभुव्यस्मत् सख्यनुचरिका ।
भवितु योग्या सह तत् पतिना यानिर्लज्जा कृतिरति कलना ॥११८
गत्वा सर्वमिदंत्वं वर्णय कामुक मुकुटमणि सखि ! सुखय !
स सुखं विहरतु सहबहुराम स्तादृश निकटं न वयंयामः ॥११९
क्रीड़ती स बहु कपट नाटिक या मुग्धव्रजपुर युवतीघटया ।
सुमुखि ! वयन्त्वनुरागमनन्यं विभ्रतमेव भजामो धन्यम् ॥१२०
राधैकान्तिकभावो न भवेत् स यदि तदस्यां सङ्गति विभवे ।
अस्तु निराशो ममतु सखीयं तादृशहृद् गमयतुसमयम् ॥१२१

अतएव उस परम कपट शिरोमणियों के साथ मिथ्या प्रेम प्रकट करनेवाले के साथ, सम्पर्क स्थापन करना हम नहीं चाहते हैं, उस से कोई लाभ नहीं है, अहो, वह तो दो दिन राधा से मिलेगा इसके बाद ही उदासीन हो जायेगा ॥११६॥ दूसरी बात है, हमारे प्राण कण्ठगत होने पर भी श्रीराधारमण, व्रज की दूसरी नारी को अपनी सेज में ले जाते हैं ॥११७ वृन्दावन में ऐसा कौन नारी है, लक्ष्मी ही चाहे श्रीनारायण की छाती में रहनेवाली हो, मेरी सखी की अनुचरी हो सकती है ? वह नारी निर्लज्ज है, इसलिए कृष्ण के साथ उसने सुरत क्रीड़ा की है ११८॥ सखि ! तुम कामुक चूड़ामणि के पास जाकर यह सब कहकर उनको सुखी करो । वह बहुकान्ता लेकर सुखी बने, हम सब उस कपट शिरोमणि के पास नहीं जाऊँगी ॥११९॥ वह बहु कपटता करके व्रजवधूयों के साथ विहार करता है, हम सब एकान्त अनुरागी धन्य प्रेमिक जनका ही भजन करुँगी ॥१२०॥ यदि आप श्रीराधा में अनन्यनिष्ठा नहीं रखते हैं, तो इस के साथ सङ्गम की आशा छोड़ ही दें । और मेरी सखी भी उक्त प्रकार रति को हृदय में रखकर कालयापन करें ॥१२१ ।

तत आगत्य तथा परि कथिते सकले राधालीजनलपिते ।
गोपीवेशस्थगित समाजः स्वयमचलच्छ्रीव्रजयुवराजः ॥१२२

दूतीगिरापि च यदा वृषभानुपुत्री
नैवागता रसविलासविधौ विदग्धा ।
गत्वा तदा स्वयमसौ युवती सुवेश
स्तां प्रेमविह्वलतनुं हरि रानिनाय ॥१२३

व्रतमिव स गतो राधारामं तद्गुण चरितैः परमाभिरामम् ।
शिरसि निहित तच्चरण पगागः प्राह ललितमतिवलदनुरागः। ।१२४
अहह ! महाद्भुतभाग विपाके तव पदमति दुर्लभमदिनाके ।
अद्य दृशाति तृषा परिदष्टं स्पृष्टं जनिफलमखिलं जुष्टम् ॥१२५
तव पद पङ्कज नखमणिचन्द्रज्योतिः प्रसरा दृशि दिशिसान्द्रः ।
स्वानन्दामृत सिन्धुरपारः स्यन्दत एवाद्भुत रससारः ॥१२६

अनन्तर दूती लौट आई और सखी की बात कह दी, तब व्रजराज स्वयं युवति बनकर नारी समाज को विस्मित करके राधा के ओर चल दिये ॥१२२॥ जब रसकला विदग्धा वृषभानुनन्दनी दूती वाक्य को सुनकर भी श्यामसुन्दर के पास नहीं आई, तब श्रीकृष्ण युवति का सुन्दर वेश धारण कर उस प्रेमोन्मत्ता राधा को रास मण्डल में ले आई ॥१२३॥ और राधा के गुण चरितादि को गाते गाते परम रमणी । श्रीराधिका की कुञ्ज वाटिका में पहुँच गये, एवं श्रीराधा के चरण धूली माथे में लेकर प्रबल अनुराग से मिठी मिठी वाणी से बोलने लगे ॥१२४॥ अहो आज महा अद्भुत भाग्य से स्वर्ग में दुर्लभ तुम्हारे चरण कमल को पिपासित नयन से दर्शन कर स्पर्श किया, निखिल जन्म का फल आज ही करतलगत हुआ ॥१२५॥ तुम्हारे पादपद्म नखमणि चन्द्र समूह की ज्योति से सब ओर निविड़ अद्भुत रस निर्यासमय अपारावार स्वानन्दामृत सिन्धु प्रवाहित हो रहा है ॥१२६॥

आश्चर्या ते रूप चमत्कृति राश्चर्या ते रुचिरुच्छलति ।
आश्चर्या ते मधुर वयः श्रीर्लास्यैर्हरिरपि मूर्च्छति सा श्रीः ॥१२७
जन्मनि जन्मनि दास्यायाअपि ते दास्य पदाशां का न हि कुरुते ।
आस्तामपरं श्याम रसोऽपि त्वत्पदकमले लभ्यः कोऽपि ॥१२८
कोऽयमहो मम भाग विशेषः बलितो गलित स्तर्कोऽशेषः ।
यदिह मया गतया हरि कार्ये प्रापि परश्चिन्तामणिरार्ये ॥१२९
रमयाप्यतिदुर्लभपदरजसां मृग्यो निरवधि गोकुल सुदृशाम् ।
वृन्दावन विधुरपि तवद सी भागकल या श्चिरमभिलाषी ॥१३०
नापेक्षा मम मोहन राजे तद्धित हेतोः कृतिमपि न भजे ।
यन्मे त्वत् सङ्गादन्यदकाम्यं तदपितदुक्तं कथये रम्यम् ॥१३१
अयि वर सुन्दरि नागरि राधे ! कुरु हरिवचने हृदयमबाधे ।

आश्चर्य तुम्हारे रूप चमत्कृति आश्चर्य है, तुम्हारे कान्ति कन्दली का प्रसारण, आश्चर्य है, तुम्हारे मधुर वयस की शोभा समृद्धि, अहो तुम्हारे नृत्य से लक्ष्मी के साथ नारायण भी मुर्च्छित होते हैं। अथवा परम मनोज्ञ हरि श्यामसुन्दर भी तुम्हारे भावाश्रय नृत्य को देखकर मुग्ध होते हैं ॥१२७॥ अहो कौन रमणी ऐसी होगी, जो जनम जनम में तुम्हारी दासी का दास्य प्राप्त करने की इच्छा नहीं करेगी ? अधिक और क्या कहूँ–उज्ज्वल श्यामरस भी तुम्हारे चरण कमल से ही मिलता है ॥१२८॥ अहो ! मेरा कैसा भाग्य फलीभूत हुआ, मेरा अशेष संशय आज मिट गया हे आर्ये ! हे सरले ! मैं हरि की सेवा के लिए जा रही थी, यहाँ पर कैसे चिन्तामणि मिल गई ॥१२९ गोकुल युवतिगण के दुर्लभ पादरज की कामना स्वयं लक्ष्मी भी करती हैं। अधिक क्या बलूँ ? वृन्दावन चन्द्र भी तुम्हारी दासी की सौभाग्य कला की अभिलाषी हैं ॥१३०॥ उस मोहनराज के प्रति किसी प्रकार अपेक्षा प्रीति आकाङ्क्षा नहीं है, और उनके हित के लिये भी किसी प्रकार यत्न नहीं करती हूँ। कारण तुम्हारे सङ्ग से मेरी दूसरी वस्तु की आकाङ्क्षा नहीं है, तथापि श्रीहरि ने जो कुछ कहा है, उस रमनीय कथा को कहती हूँ ॥१३१॥ अयि वराङ्गने

यन्मम मुखतः श्रवण पुटेन स्त्रदितं त्वां वशयेत रसेन ॥१३२

पयस इव द्रव भाव सहजः प्रणय महोघ स्तव मयि सुनिजः ।
सुमुखि! तदद्य किमेव असारं मयि कुरुषे गुणदोष व ारम् ॥१३३

तव रसपुष्टि कृते व्रजरामा मुरलिरवेण हृता अभिरामाः ।
तत्र वृथा किमुद्घटय दोषं भवतु प्राणेश्वरि ! भज तोषम् ॥१३४

गोप किशोर्य स्तत्र भ्रम युक्ताः काश्चन थुत्कृत्याथत्यक्ताः ।
श्रुत्वा काश्चिदनुत्तमरूपा स्त्यक्ता अनुभूयाननुरूपाः ॥१३५

अन्या दशञ्च कीभूय क्षिप्तह्रीया मां रह आनीय ।
पाणौ पीतपटे वा धृत्वा मत्ताः सकृदधरमधुपीत्वा ॥१३६

एका कपि तवास्ते योग्या व्रज इति दूतीजन वाग्भङ्ग्या ।
काचन काचन भुक्त्वा त्यक्ता साम्प्रतमत्र वयं सुविरक्ताः ॥१३७

नागरि राधे ! हृदय की पीड़ा नाशक हरि कथा में मनोनिवेश करो, कारण मेरे मुख से निःसृत कथा का आस्वादन श्रवण पुट से करने पर कथा तुम्हें रसमयी करेगी ॥१३२॥ जलका जिस प्रकार स्वभाविक द्रवीभाव है, उस प्रकार मेरे प्रति तुम्हारे प्रणयातिशय्य भी अतिनित्य हैं। हे सुमुखि ! तब क्यों आज वृथा मेरा गुण दोष विचारने लगी हो ॥१३३॥ तुम्हारे रस पोषण के लिए अतिरमणीय व्रजरमणीगण का आह्वान मुरली ध्वनि से मैंने किया है। उस से क्यों तुम दोषोद्घाटन कर रही हो ? हे प्राणेश्वरि जो कुछ होन का है, वह तो हो चूका है, अब सन्तुष्ट हो जाओ ॥१३४॥
किसी किसी गोप रमणी को जो मैंने सम्भोग किया वह भ्रम से हुआ है, तुम्हीं हो ऐसी प्रतीति मेरी हुई थी। किसी को थुत्कार से त्याग किया है, किसी का रूप की कथा सुनकर भी उसको अदृश्य मानकर त्याग किया है ॥१३५॥ अपरापर दश पाच रमणी मिलकर निर्लज्ज होकर मेरा हात व पीतपट पकड़कर एकान्त स्थान में मुझ को ले जाकर एकवार मात्र मेरी अधर सुधा पानकर वे सब उन्मत्ता हो गई हैं ॥१३६॥ हे नागर इस व्रज में एक ही रमणी है, वह ही तुम्हारी योग्या है, दुती की उस बातसे किसी किसी गोपी को सम्भोग

हरि हरि काममहाम्बुधिपारं कावा नेष्यति मां सविकारम् ।
स्थितवानेव महर्निश मन्त स्चिन्तालतिममिलन्निजकान्तः ॥१३८

त्वद्वनमध्यसुप्तमति विधुर त्वं मा बोधितवत्यसि मधुरम् ।
स्वात्मनं श्रीराधानाम्नीं प्रकटितं मच्चिन्तातिग धाम्नीम् ॥१३९

स्वप्ने जागरणे वा प्रेयसि ! पूर्वमपि त्वं हृदि मे स्फुरसि ।
बहिरिदमनुपलभ्य तव रूपं बंभ्रमामि कुलमिथ्यारोपम् ॥१४०

सहजादेव तु दिव्या मुरली स्वयमधि गायति नाम गुणालीः ।
तव परमाद्भुत मधुरिम भरिता दिननिशि न मया क्षणमपिरहिता ॥१४१

गायति मुरली मम किमपूर्वं सन्ततमिति विस्मितधीरम् ।
अहह पुरा करुणामयि संप्रति धन्यतमां स्तौम्यनिशममूं प्रति ॥१४२

अनया ससज त्वद्गुण रसया प्यद्य कृता स्त्वयि काकुप्रचयाः ।

करके ही छोड़दिया है, अब मैं इस बिषय में अतिशय विरक्त ही हो गया हूँ ॥१३७॥ हरि हरि विकार ग्रस्त मुझ को कौन व्यक्ति काम समुद्र का पार में ले चलेगा ? दिन रात में इस चिन्ता से विता रहा हूँ। तुम्हारे निज प्राण नाथ को मानस चिन्ता जाल ने फंसा लिया है ॥१३८॥ ततपश्चात् मैं विरह से व्यथित होकर तुम्हारे उपवन में सोगया, तब तुमने स्वप्न के छल से निज मधुर श्रीराधानाम को सुनाकर एवं मेरी चिन्तातीत रूप स्वरूप को देखाकर मुझ को तुमने जगाया ॥१३९॥ हे प्रेयसि स्वप्न व जागरण में पहले से ही तुम मेरी हृदय में स्फुरित हो रही हो, बाहर तुम्हारे रूप को न देखकर इतस्ततः मिथ्या विषय में अन्यनारी में तुम्हारे रूप को आरोप कर ही अबतक घूम रहा हूँ ॥१४०॥ मेरी मुरली सहज ही स्वयं तुम्हारे नाम गुणावली का गान उच्चैःस्वर से करती रहती है, वह तुम्हारी अद्भुत माधुरी पूर्ण होने के कारण दिवानिशि क्षण काल के लिए भी मैं उसको छोड़ नहीं सकता हूँ ॥१४१॥
मेरी मुरली क्या अपूर्व गाती है ? यह सोचकर पहले मैं अचरच में पड़ गया था। अहो ! करुणामयी, अब मैं उस गान का तात्पर्य को समझकर धन्यतमा मुरली का सर्वदा स्तव करता हूँ ॥१४२॥

दुस्तर काम मदन दलनाय प्रेयसि ! कथमपि तव मिलनाय ॥१४३
त्वन्नामैक परा मम मुरली स्वयं मायन्मुग्धा कुलटाली ।
तत्र न कुरु मयि दोषारोपं ननुरस रूप मपित्यज कोपम् ॥१४४
त्वत् सङ्गम रस निवसज्जीवः प्रणयिनि शङ्का रहितोऽतीव ।
दीन दयार्त्तः कुतुकित हृदयः खेलामाहुत गोपीनिचयः ॥१४५
सुप्रसन्नवदनां न निरीक्षे त्वां यदि कृतमज्जीवन रक्षे ।
को नु तदा मम कौतुक कामः कायादेरपि वृत्तिविरामः ॥१४६
क्षान्ति स्नेह कृपामय प्रकृते निज भृत्ये मयि दीने प्रणते ।
कर्णजाप मपि कुर्वत्यालिनिकरे नेध्याध्यागः पटली ॥१४७
अथ हतभाग्यतमे मपि राधे ! नाशु प्रसीदस्यसदपराधे ।
त्वत् पदकाङ्कितवृन्दाविपिने क्वापि दशास्यान्मम मृगनयने ॥१४८

स्वभाविक तुम्हारे गुण रसान्मत्ता मुरली तुम्हारे लिए अनेक दैन्योक्ति की है। हे प्रेयसि ! सुनो उसका कारण मैं कहता हूँ। दुरन्त काम पीड़ा को नष्ट करके जिस किसी प्रकार से तुम्हारे साथ मेरा मिलन कराने के लिए ही निनादित होती है ॥१४३

मरी मुरली तुम्हारे नाम लेकर निनादित होती है, किन्तु मुग्धा कुलटा रमणीगण स्वयं आ जाती है। उससे तम मेरे प्रति दोषाराप नहीं कर सकती हो। हे राधे तुम्हारा यह कोप मान रस निदान होने पर भी अब उसको छोड़ो ॥१४४॥ हे प्रणयिनि ! तुम्हारे सङ्गम की आशा से मैं जीवित प्राण निरतिशय निःशङ्क था। मैं दीन जनके प्रति दयार्त्त एवं कौतूहलाक्रान्त होकर तब समागत गोपी मण्डली के साथ ही मैंने क्रीड़ा की है ॥१४५॥ मेरा जीवन की रक्षा के लिए यदि तुम को प्रसन्न नहीं देखता हूँ,तब मेरी यह कौतुक और काम अति तुच्छ होगी अधिक मैं क्या कहूँ। तब मेरी देहादि वृति भी विरत होगी। अर्थात् जीवन चला जायेगा ॥१४६॥ हे क्षान्ति, स्नेह कृपामयि राधे ! तुम्हारा निज भृत्य दीन, प्रणत दास के प्रति सखी समूह अनेक प्रकार निन्दावाद तुम्हारे निकट करने पर भी तुम उस में दाष राशिका ग्रहण न करना ॥१४७॥ हे मृगनयने राधे शेष

श्रु त्वैवं हरिवाक्यकदम्बानेष्यसि यदि चल तिष्ठ सुखं वा ।
मम तु भवत्याः श्रीपदकमलादितरपदेधीस्तनुरपि न चला ॥१४९
साश्रु सगद्गदमिति निगदन्तं कान्तावेशधरं निजकान्तम् ।
विस्मयमूकास्वालिषु राधा प्राह सरसमिदमनुरागान्धा ॥१५०
श्यामलगोपकिशोरिस्त्वयिमे कृष्ण इवात्माप्रीतिं चकमे ।
क्व स्थितवत्यसि कालमियन्तं पुण्यै स्तव मुख मैक्षि सुकान्तम् ॥१५१
प्राय स्तीव्रतरानुध्यातः कृष्ण स्त्वं मम सुसखीभूतः ।
इदमतिभद्रतरं यदशङ्कं साधुनिधास्ये प्रियतममङ्कम् ॥१५२
यदि मम कथमपि तादृश वेशः स्मृतिपथमेयान्निजहृदयेशः ।
वर्होत्तंसा वादितवंशा सुखयिष्यसि मां त्वं तद्वेशा ॥१५३
यदपि परार्द्धात् हरिरपराधानकृत तथापि क्षमते राधा ।
यत्ते वदन चन्द्रसौन्दर्य्यं स्वमपि ममक्षीणादाश्चर्यम् ॥१५४

कथा यह है कि–यदि हतभाग्यतम निरपराध मेरे प्रति शीघ्र प्रसन्न न हो तब तुम्हारे पदाङ्कित इस वृन्दाविपिन में मेरी मृत्यु होजायेगी ॥१४८॥ श्रीहरि के यह बात सुनकर यदि जाने की इच्छा हो तो चलो नहीं तो यहाँ पर आनन्द से रहो मेरा मन तो तुम्हारे चरणतल से बिन्दुमात्र चञ्चल नहीं होता है ॥१४९॥ अश्रुधाराक्रान्त नयन से गद्गद् स्वर से कान्ता वेशधारी निज कान्त श्याम सुन्दर जबउस प्रकार कहने लगे थे, तो सखीगण विस्मयान्वित होकर नीरव रही, तब अनुराग से अन्धीभूता श्रीराधा उनको प्रेम से इस प्रकार कही ॥१५०॥ हे श्यामल गोप किशोरी ! तुम्हें देखकर मेरा मन श्याम–सुन्दर के समान प्रीतिमय आचरण करना चाहता है। अभीतक तुम कहाँ रही, अनेक दिनों के वाद पुण्य से ही आज दर्शन मिला ॥१५१॥ तैल धारावत् अविच्छिन्न प्रवाह से स्मरण कर कृष्णवर्णा मनोहर सखी रूप में मेरे पास आई हो, यह अति सुन्दर है, मैं निःशङ्क चित्त से प्रीयतम को क्रोड़देश में स्थापन करूंगी ॥१५२॥ यदि इस प्रकार वेष भूषा से शोभित होकर मेरा हृदयेश्वर मेरी स्मृति में उदित होते हैं, तब तुम शिर में मयूर पुच्छ से निर्मित चूड़ा धारण कर

एह्येहि स्फुट नीलसरोरुहसुकुमाराङ्गि सखीमुपगूह ।
स्नेहोत्तरले मां हरिविवरप्रभवः शाम्यतु बत तन्तुदाहः ॥१५५
इत्युक्त्वासीद् वृषभानुसुता सपदिविवृद्ध प्रणयावशता ।
प्राण पतिं पुलकाञ्चितगात्रा परिभ्यास्ते मुकुलितनेत्रा ॥१५६
अथ परिरभ्य हरिः परिचुम्बन्मुखमरसयदपि चाधरबिम्बम् ।
कुचमुकुले नखराङ्कुरदायी कृष्णऽभूत पुनरिति कुस्मायी ॥१५७
ज्ञातं ज्ञातमहो रस भरितं धूर्त्तमणे ! तव सकलं चरितम् ।
इति सहसित राधेरित हृष्टः कुञ्जगृहान्तः सपदि प्रविष्टः ॥१५८

कलितयुवति वेशोमानिनीमेत्य राधाम् ।
हरिरनुनय काकु व्याकुलोक्ति प्रपञ्चैः ॥
सपदि सहजवृद्ध प्रीतिदत्ताङ्गसङ्गां
स जयति परिहृष्यन् गाढ़मालिङ्ग्य कान्तम् ॥१५६

बँसुरी बजाते हुये उस वेष से ही मुझ को सुखी कर सकोगी ॥१५३॥ यद्यपि श्रीहरि असंख्य भी अपराधाचरण करे, श्रीराधा उसको क्षमा करेगी, तुम्हारे यह आश्चर्य वदन चन्द्र का सौन्दर्य ही मेरा यथा सर्वस्व को खरीद लिया है ॥१५४ हे सुजात नील कमलवत् कुमाराङ्गी ! आओ आओ इस सखी को आलिङ्गन करो यह कहकर वृषभानु नन्दिनी बढ़ती हुई प्रणय रस से अवश हो गई, एवं पुलकाञ्चित कलेवर से प्राण पति को आलिङ्गन कर नयन मूँद कर रही ॥१५५-१५६॥ तदनन्तर हरि भी उनको आलिङ्गन करके मुख चुम्बन करते करते अधर सुधा पान किए, कुच मुकुल में नखाराघात करते करते पुनर्वार कृष्ण मूर्त्ति को प्रकट कर ईषत् हास्य करने लगे ॥१५७॥ हे धूर्त्त शिरोमणि ! अहो तुम्हारे रस भरित सब चरित्र ही जान गई, श्रीराधा की इस हास्योक्ति से हृष्टचित्त श्रीकृष्ण सहसा ही कुञ्ज गृह में घुस गए ॥१५८॥ श्रीहरि युवति वेष धारण कर मानिनी श्रीराधा के निकट आ गये थे, बहुविध अनुनय विनय काकूक्ति द्वारा कान्तामणि श्रीराधा का विवर्द्धिष्णु प्रीति भरित अङ्ग

अथ सहजोज्ज्वल भावोज्जृम्भः प्रियया लम्भित भुजपरिरम्भः ।
प्रकट तनुः स श्याम किशोर स्तन्मिलित श्चलितो रतिचोरः ॥१६०
तौ रसमूर्ती राधाकृष्णौ श्रीवृन्दावन रास सतृष्णौ ।
अति शुशुभाते मोहनवेशौ प्रतिपदविरचित केलिविशेषौ ॥१६१
गौर श्यामल मोहन मूर्त्ती निरवधि वर्धि मदनरसपूर्त्ती ।
निरुपम नवतारुण्य प्रवेशौ रास विलासौचित वरवेशौ ॥१६२
वेणी चूड़ा रचित सुकेशौ मिथ उद्भवदति मदनावेशौ ।
अरुण पीतपटवर परिधानौ दिशि दिशिविसरद् दीप्तिवितानौ ॥१६३
रति रतिनायक कोटिविलासौ मधुर विलोकपरस्परहासौ ।
मिथ आश्लेषित निजतनुदेशौ पुलक मुकुल कुलसततोन्मेषौ ॥१६४

[illegible]ङ्ग को प्राप्त कर उनको निविड़ आलिङ्गन पूर्वक परितुष्टि होकर [illegible] युक्त हो रहे हैं ॥१५६॥
सहज उज्ज्वल भावमय वह रति लम्पट श्याम किशोर प्रिया का भुज परिरम्भण प्राप्त कर युवति वेश को छाड़कर निज देह प्रकटकर दोनों मिल कर रास मण्डल के ओर चल दिये ॥१६०॥ श्रीवृन्दावन में रास रस के लिए तृष्णाशील वह रस मूर्त्ति राधा कृष्ण मोहन वेश से अतिशय शोभा का विस्तार करने लगे वे दोनों प्रतिक्षण में ही विशेष विशेष केलि विलास करने में प्रवृत्त हो गये ॥१६१॥ वह गौर श्याम मोहन मूर्त्ति युगल निरन्तर वर्द्धिष्णु मदन रस पूरित होकर अनुपम नव तारुण्यका उन्मेष रास विलासोचित अत्युत्तम वेश से सज्जित हो गए ॥१६२ वे दोनों सुन्दर केशों से वेणी एवं चूड़ा की रचना की है, परस्पर के मदनावेश क्रमशः उदित होने लगा, दोनों के परिधान में अरुण वसन एवं पीत वर्ण के अत्युत्तम वसन दिक् दिक् में दीप्तिराशि का विस्तार कर रहे हैं ॥१६४॥ दोनों कोटि कोटि काम देव के विलास रस की प्रकाश कर रहे हैं। परस्पर के प्रति निरीक्षण से परस्पर मधुर हँस रहे हैं। निज तन को परस्पर के द्वारा आलिङ्गन करके रखे हैं । सदा ही उन दोनों के अङ्ग में पुलकावलि रूप अङ्कुर का उन्मेष दिखाई देता है ॥१६४॥

मिथ ऊरुविधकृत नर्मालापौ नव नव निर्मित केलीकलापौ ।
विविध भङ्गिगति विजित मरालौ नूपुर रसना क्वणित रसालौ ॥१६५
रुचिरान्दोलन सुभुज मृणालौ गल दोलायमानवरमालौ ।
मिथ उत्पुलक भुजा कलितांसौ सव्यतदन्यभुजाम्बुजवंशौ ॥१६६
मिथ ईक्षित मुखचन्द्र सहासौ श्रुतिपूरण निरतेरितवंशौ ।
द्रुत काञ्चन मरकत रुचिचोरौ सर्वाद्भूततम दिव्य किशोरौ १६७
नित्यमधुर वृन्दावन केलौ शुद्धमहारस पूर्ण गुणाली ।
कलित सुरज करताल सुवीणै नृत्यगीत बरवाद्य प्रवीणैः ।
राधाकृष्ण रसैक प्रगनै. सहितौ सुरसोल्लसितालिजनैः ॥१६८
मणिमय पेटिकान्तरूपनिहितं रास विलासोपकरणजातम् ।
आदायाति हर्षभरभरिता स्तत् सेवैक परा अनुयाताः ॥१६९

परस्पर बहुविध नर्म परिहास रस रहस्यमय आलाप कर रहे हैं, नित्य नव नवायमान केली विलासादि का उद्‌भावन करते रहते हैं, विविध गतिभङ्गी को अङ्गीकार कर मराल को भी पराजित कर रहे हैं, एवं चरण में नूपुर एवं कटि में रसना रसाल ध्वनि कर रही हैं ॥१६५॥ दोनों के भुजमृणाल मधुर मधुर आन्दोलित हो रहे हैं, गलदेश में अत्युत्कृष्ट मालाभूँका ले रही है वे दोनों पुलकाञ्चित बाहु से परस्पर के स्कन्ध देश का अवलम्बन करके हैं, श्रीराधा के वाम हस्त में पद्म एवं श्याम के दक्षिण हस्त में वंशी शोभित हैं ॥१६६॥ परस्पर के मुख को देखकर परस्पर हँसते रहते हैं, श्याम बँसुरी बजाते हैं, श्रीराधा उसको सुनकर श्रवण को तृप्त कर रही है, एक ने तो गलित सुवर्ण वर्ण के उपर विजय लाभ किया है, तो दुसरे ने मकरत कान्ति का चोरी कर लिया है। यह दिव्य किशोर द्वय सर्वदा ही अद्‌भुत है ॥१६७॥ शुद्ध महारास श्रृङ्गारपूर्ण गुणावलि भूषित यह युगल नित्य ही मधुर वृन्दावन में मधुर केली करते रहते हैं, मृदङ्ग करताल, एवं सुन्दर वीणा यन्त्र लेकर नृत्य गीत, वाद्य में कुशल राधा कृष्ण के रस का एक मात्र विस्तारकारी सुरस से उल्लसित सखीगण को साथ लेकर दोनों ने यात्रा की एवं निरतिशय

शुद्धोज्ज्वल प्रेमरसैक शक्ति
तद्वत् स्वरूपौ सुखसार राशी ।
तौ नः किशोरौ अतिगौरनीलौ
खेलायतां चित्रमनोजलीलौ ॥१७०

गत्वा तावथ वृन्दारण्यं स्वगति पुरस्तादुत्सवशून्यम् ।
परिचरणोल्लसित व्रजयुवती मध्येरेजतुरद्‌भुतदीप्ती १७१
काश्चन चक्रुः पदसंवाहं काश्चनभेजुः सुरतोत्साहम् ।
काश्चनगन्धैर्व्यलिपन्नपराः कण्ठे निदधुर्मालारुचिराः ॥१७२
चक्रुरथैका भ्रूकुटिविलासं विदधुः काश्चन रतिपरिहासम् ।
काश्चन मृदुमृदु विदधुर्व्यजनं का अपि चक्रुर्भूषारचनम् ॥१७३
नागवल्लिदलमुज्ज्वल चन्द्रं दत्तवती काप्याधिमुखचन्द्रम् ।
नवनवकामकलाविर्भावं व्यञ्जितवत्यः काश्चन भावम् ॥१७४

आनन्द पूर्ण युगल किशोर की सेवा निष्ठ दासीगण मणिमय पेटिकाके अभ्यन्तर में रासलीला के उपयोगी द्रव्य समूह को लेकर पीछे पीछे चलने लगीं ॥१३८ १६९॥ विशुद्ध उज्ज्वल रस की शक्ति राधा एवं शक्तिमान् श्रीकृष्ण युगल रूप के देह गठन किए हैं, अतएव उसका ही सुख विनिर्यास राशी को दोनोंजन भोग कर रहे हैं। हमारे अतिगौर नीलात्मक किशोर द्वय विचित्र कामलीलापरायण होकर खेल रहे है ॥१७० तदन्तर उत्सव शून्य वृन्दावन में उपस्थित हो गये, परिचर्या रस में मग्न व्रज युवतिगण के मध्य में दोनों अद्‌भुत कान्ति का विस्तार कर विराजमान हो गये ॥१७१॥ कोई तो पाद सम्वाहन करने लगी, कोई तो सुरत मङ्गल करने लगी, किसी ने विविध गन्ध द्रव्य द्वारा अङ्ग लेपन किया, अन्यान्य गोपीगण दोनों के कण्ठ में मनोहर माल्य प्रदान किये ॥१७२॥ किसी ने कटाक्ष पात किया, अपर गोपीयों ने भूषण की रचना की ॥१७३॥ किसी गोपी ने दोनो के मुखचन्द्र में ताम्बूल एवं उज्ज्वल कर्पूर प्रदान किया, अन्यान्य गोपीगण नव नवायमान काम कला का आविर्भाव सूचक भाव की

मृदुमृदुवीणाद्यतिनिरवद्यं वादितवत्यः काश्चन वाद्यम् ।
काश्चन संजगू रसनानुरागा, मधुरमुदञ्चितपञ्चमरागाः ।।१७५
बहुविध हस्तक गतिलीलाभिः काश्चन वालितानृत्यकलाभिः ।
प्रिययोरुपरि सुपुष्पच्छत्रं काश्चन जगृहुः परमविचित्रम् ।।१७६
वरनागरिका वरनागरयो रुन्मदमदनरसप्रहसितयोः ।
प्राप्य तयोः करपद्मात् प्रमदाः कमपि प्रसाद व्यलसन् प्रमुदाः ।।१७७
छित्वा छित्वा वोटक भेदान् ललितलवङ्ग क्रमुकच्छेदान् ।
रसिक मिथुन मुपयोजितवत्यः काश्चन काश्चन पतद्ग्रहवत्यः ।।१७८
कर्पूरादि सुवासित शीतं भृङ्गारेणसलोलमुपनीतम् ।
कृत्वाप्रियामिथुनेन निपीतं स्वं विदधुः काश्चन सुप्रीतम् ।।१७९
आपुः काश्चन कण्ठगमाला स्वभरणानि च का अपि बालाः ।
वरताम्बूल सुविटकमन्या श्चर्वितमेव तु काश्चन धन्याः ।।१८०

व्यञ्जना की ।।१७४।। किसी ने वीणा वादन किया, किसी ने रसानुराग से पञ्चमराग का आलाप मधुर स्वर से किया।।१७५।। किसी ने बहुविध हस्तक गतिलीलादि नृत्य कला का पदर्शन किया, किसी ने प्रियतम युगल के ऊपर परम विचित्र सुन्दर पुष्पछत्र धारण किया ।।१७६।। अत्युत्तम नागरी एवं अत्युत्तम नागर उन्मद मदन रस से हास्य करते हैं, उनके हस्त कमल से प्रसाद प्राप्तकर प्रमदागण प्रचुरतर आनन्दित होकर विराजित हैं।।१७७।। किसी ने उपादेय लबङ्ग गुवाक खण्ड युक्त बहुविध ताम्बूल वीटिका का आस्वादन कराया, अपर किसी ने पिकदानी हात में लेकर खड़ी हो गई ।।१७८ किसी ने भृङ्गार को भरकर शीतल जय ले आई एवं प्रियतम युगल को जलपान कराकर आपने को खुसी किया ।।१७९।। किसी व्रजवाला ने कण्ठस्थित प्रसादी माला किसी ने सुन्दर आभूषण प्राप्त किया, किसी ने स्नेहालिङ्गन प्राप्त किया, किसी ने कर धारण से आनन्द लाभ किया किसी गोपी कर्ण कथा सुनकर खुसी हुई तो कोई गोपी प्रशंसा सुनकर आनन्दिता हो गई ।।१८०।।

एकाः स्निग्धालिङ्गनमापु कर्वृत्यैव काश्च पर्यापुः ।
काश्चन कर्ण कथाभि मुंदिताः काश्चित् क्वचनश्लाघनमहिताः १८१
अथ सुरतोत्सुकरामावृन्दं दुर्धरकामार्त्तिभिरत्यन्धम् ।
दृष्ट्वात्युत्कट भावविकारं राधानिजपतिमवददुदारम् ।।१८२
अबलाः प्रियविषमस्मरबाधास्तां तु न दित्सेत् त्रुटिमपि राधा ।
तच्छृणु कथमाम्येकमुपायं रमयसि येन युवतिसमुदायम् ।।१८३
कान्तकदाचिन्मम सङ्कल्पः सममूदकृतविचारोऽनल्पः ।
बहुरूपं त्वां रमयितुमुरुभि र्बहुभीरूपै र्बहुविधरतिभिः ।।१८४
अत्युत्कण्ठाभरभावनतस्त्वन्मद्रूप स्तोमोदयतः ।
केवल ऊरुवैदग्ध्या विहिता मनस पूर्त्तिः काप्यत्त उदिता ।।१८५
प्रिय सखी ! किं नु करोषीत्युक्त्वा गात्रे मम कराघातं कृत्वा ।
सख्या भग्नसमाधिर्नयने, उन्मील्याहसमखिलाकलने ।।१८६

अनन्तर दुर्धर्ष काम पीड़ा से महान्ध सुरतोत्सुका रमणीवृन्द को उत्कट भाव विकारशील देखकर श्रीराधा ने निज नायक श्रीश्याम-सुन्दर को सरलभाव से बोली ।।१८१-१८२।। हे प्रियतम ! ये अवलागण विषम काम पीड़ा से व्यथित हो रही हैं, राधा उनसब को बिन्दुमात्र भी कामपीड़ा देना नहीं चाहती है, अतएव एक उपाय बोलती हूँ, सुनो ! इस से युगपत् सब युवतियों के साथ रमण कर सकोगे ।।१८३।। हे प्राणकान्त किसी समय विना विचार से ही मेरा एक संकल्प हृदय में जग उठा था, कि-बहुविध रूप प्रकटनकारी तुम्हें बहुविध रति की नायिका के साथ अनेक प्रकार से रमण कराऊँगी ।।१८४।। अति उत्कण्ठा से तुम्हारे ओर मेरी रूप राशि को प्रकट कर बहुल वैदग्धी के साथ केलि विलासादि का समाधान मैंने किया है, एवं इस से ही मेरा यह अनिर्वाच्य मनोवाञ्छा पूर्ति का उदय हुआ है ।।१८५।। उस समय मुझे समाधि मग्न देखकर "हे प्रिय सखी ! क्या कर रही हो" ? ऐसा कहकर किसी सखी मेरा अङ्ग में कराघात करने से मेरी समाधि टूट गई थी, अनन्तर निखिल प्रस्ताव का समाधान को देखकर मैं नयन उन्मीलन कर हँस गई थी ।।१८६।।

सम्प्रत्यपि च मुहूर्त ध्यात्वा, कुर्वे बहुरूपं रसयित्वा ।
रूपं स्तैरभिरूपैर्नागर, गोकुल युवति गणैस्त्वं विहर ॥१८७
शैशव इष्ट योगमायादान् मम संकल्पसिद्धि मतिरसदा ।
त्वमनन्यानुरागरतिरभवस्तद्वदस्तु सुखसीमानुभवः ॥१८८
अथचित्रेक्षण कुतुकिनि रमणे, स्मयवति चाथ रहस्या लगणे ।
किञ्चित् स्मितरुचि मोहन वदनं दध्यौराधामुकुलित नयनम् ॥१७
प्रकटाः प्रियतममूर्त्तो मधुरा दृष्ट्वा लोभादतिकामधुरा ।
कृत्वा स्वमपि च सा तावन्तं व्यसृजच्चु म्बितपरिरब्धं तम् ॥१९०
अथ कलितप्रियपाणि सरोजा राधातीवविवृद्धमनोजा ।
मञ्जुलकुञ्जविलोकनकपटाद् गहनवनं सहसैवप्रविष्टा ॥१९१
स बहुरूपहरिररमत ताभिः प्रथमोज्ज्वलरसरभस युताभिः ।

अभी भी मैं मुहूर्त्त काल ध्यान कर रस मय बहु रूप का प्रकटन कर रही हूँ । हे नागर ! तुम भी (समाधि में इष्ट) उस प्रकार अनेक मनो मोहन रूप को प्रकाश कर गोकुल युवतियों के साथ बिहार करो ॥१८७॥ शिशु काल में अतिरसमयी इष्ट देवता योगमाया ने मुझे संकल्प सिद्धि का वर प्रदान किया है, तुम अनन्यानुरागमय पति (नागर) को प्राप्त करो एवं उस प्रकार से ही तुम्हारी सुखैक शेष की उपलब्धि हो ॥१८८॥ तत् पश्चात् राधा रमण विचित्र (रासरस) दर्शन के लिए कौतुकी होने पर एवं एकान्त में सखीगण भी हँसते रहने के कारण राधा ईषत् मृदु मधुर हास्य शोभित मोहन वदन से नेत्र को मूँद कर ध्यान करने लगी ॥१८९॥ तब आपने प्रियतम की अनेक मधुर मूर्त्ति राजिका प्रकटन को देखकर लोभ से अति कामोन्मत्ता होकर अपने को भी उतनी मूर्त्तियों में प्रकाश किया एवं उस उस स्वरूप को प्रियतम द्वारा चुम्बित एवं आलिङ्गित कराया ॥१९०॥ अनन्तर प्रियतम के कर कमल को पकड़ कर श्रीराधा निरतिशय कामावेग से मञ्जुल कुञ्ज दर्शन के छल से सहसा गहन वन में घुस गई ॥१९१॥ तब वह बहु रूपी हरि उस आदि उज्ज्वल रसरभस युक्त राधा के काय व्यूह, राधा गोपीयों के साथ रमण करने

रसिकशिरोमणिरतिरसिकाभि र्मधुरिमराशिरधिकमधुराभिः ॥१९२
प्रथमसमागमह्रीभयबलिता दूरात्तूष्णीमास्थितविनताः ।
काश्चननिन्ये शयनमुदारः सानुनयंकृतबाहुप्रसारः ॥१९३
किमपि करोमि न ते भजशयनं स्वजने किमिदमहोसङ्कुचनम् ।
पायय किमपि वचोऽमृतमतुलं, स्वीकुरुगन्धमाल्यताम्बूलम् ॥१९४
कामपि धन्यामित्यनुनीय, स्मितरुचिरां सहसानीय ।
शयनं नेति सगद्गद्वचनामलमाश्लिष्याचुम्बत् प्रमनाः ॥१९५
निद्राव्याज विमुद्रित नयनं वदनं चुम्बितमन्याः शयनम् ।
प्राप्ताः स्वस्य हसन्नुरुपुलकः पर्यरभत नव नागर तिलकः ॥१९६
नेति वचन रचना अपि चान्याः कर कमले धृतवानतिधन्याः ।
आनियाङ्क मसौ कुसुमाली मरचयदलकचये वनमाली ॥१९७

में प्रवृत्त हो गए ! तब रसिक शिरोमणि के साथ रति रसिकागण का मिलन हुआ, मधुरिमराशि के साथ अधिकतर माधुरी धारिणी का सङ्ग हुआ ॥१९२॥ किसी किसी रमणी गोपी प्रथम समागत में लज्जा एवं भय के कारण दूर में निर्वाक् एवं निष्पन्द होकर अवनत मस्तक होकर रही, यह देखकर मोहन कृष्ण बाहु प्रसारण द्वारा अनुनय कर उन सबों को सेजपर ले गए ॥१९३॥ तुम्हारे कुछ नहीं करेंगे, तुम सेजपर सो जाओ, अहो ! निजजन के पास ऐसा सङ्कोच क्यों करती हो, एकवार वाक्यामृत पान कराओ, यह अनुपम गन्ध माल्य ताम्बूलादि ग्रहण करो ॥१९४॥ इस प्रकार किसी धन्या गोप किशोरी का अनुनय किए, अनन्तर उसकी मृदु मधुर हास्यमय रमणीय मूर्त्ति को देखकर उसको सहसा सेज पर ले गए, वह गद्गद् स्वर से ना ना कहकर असम्मति प्रकट करने पर भी श्यामने आनन्दित होकर उस को आलिङ्गन चुम्बन प्रदान कर कृतार्थ किया ॥१९५॥ अन्यान्य गोप बालागण श्याम की शय्या के पास आकर श्याम को निद्राछल से मुद्रित नयन देखकर चुम्बन करने लगीं नव नागर तिलक ने उसी समय हँस हँस कर पुलकायित होकर उन सब को परिरम्भण किया ॥१९६॥ अपरापर व्रजङ्गनागण 'ना' कह कर निषेध करने पर भी

काश्चन हारलतार्पण कपटादुन्मदकरमृदितस्तनसुघटा ।
सुखमपिदु;खमिवाभिनयन्ती वीक्ष्य हरिः स जहासलसन्तीः ॥१९८
कुचमुकुलादौकृतनखलिखनः पीताधरदलकृतरददलनः ।
तासामुत्तम्भित पुरुमदन स हरिरखेलच्चुम्बितवदनः ॥१९९
सहसा नीविबन्धनमिलितं सम्भ्रमयुतयुवतिकरविधृतम् ।
अतिदुर्धरमदनात्युत्तरलं तदतिविरेजे हरिकरकमलम् ॥२००
रेमे मधुपति रथललनाभि र्बहुविधसुरतबन्धरचनाभिः ।
रतिरसरभसोल्लसिततदूरुः स्पर्शन बहु परिपाटो चारुः ॥२०१
उच्छृङ्खलं रतिखेला श्रान्तः प्रोन्मदरति रभसे यतकान्तः ।
तन्मुख वीक्षण कृत परिहासः स्मेरमुखोऽमोदत सविलासः ॥२०२

वनमाली उनसब को गोदी में बैठा लिए ऐवं उनसब के कुञ्चित केशदाम को पुष्प हार से सज्जित किए ॥१९७॥ किसी किसी गोपी के हारलतादान करने के छल से उन्मत्त हस्तसे श्याम ने उनके स्तन कमल द्वय का मर्दन किया। स्व सुख में भी वेसब दुःखवत् अभिनय करने लगी, यह देखकर श्रीहरि ने हँसा ॥१९८॥ उनके कुचमुकुलों में नखराघात एवं अधररसपान पूर्वक अधर में दन्ताघातकरके महाकाम को प्रबुद्ध कर चुम्बित वदन श्रीहरि खेलने लगे ॥१९९॥ अति दुर्धर्ष मदनावेश से परम चञ्चल श्रीहरि के कर कमल सहसा नारियों के नीवीबन्धन खोलने में प्रवृत्त होने पर सम्भ्रम युक्त गोपीगण ने तत्क्षणात् उसको पकड़ लिया ॥२००॥ तब अनेक विध रति बन्ध रचना कर गोप ललनागण के साथ मधुपति रमण करने लगे। रति रस प्राचुर्य से उल्लसित होकर उन के ऊरुदेश उस समय गोपीगण के स्पर्श से बहु परिपाटि के साथ सुचारुता को प्रकट किए ॥२०१ अमर्याद रति खेल से परिश्रान्त एवं प्रोन्मद मदनावेश में निरत होकर भी रमणीय हरि उन सब के मुख को देखकर परिहास करने लगे। उन के मुख में मृदु मधुर हास्य था, प्रमदागण के साथ विलास कर आपने आमोद प्राप्त किया ॥२०२॥

इत्थं विहरति राधा रमणे, बलदभिमाने युवति विताने ।
तानि पिधाय स्वकरूपाणि क्वापि विजह्रे राधाजानिः ॥२०३
आनीय गोपतरुणीर्मुरलीरवेण
राधामपि प्रचुर काकुभिरागमय्य ।
तासां स्वकल्पत रतिसन्ततिजाभिमानं
शान्त्यै कृपानिधिरथ प्रिययैक आसीत् ॥२०४
कृष्णमदृष्ट्वा गोप्योऽनवधौ, सपदि निमग्नाः शोक पयोधौ ।
हा नाथेति व्याकुल वचना श्चेरुः परितो विह्वल करणाः ॥२०५
चिन्मयमन्तरुदितहरिरूपं मूर्त्तमिवाच्युतसुरतस्वरूपम् ।
वृन्दाविपिनलतातरुवृन्दं ताः पप्रच्छुर्निजसुखकन्दम् ॥२०६
भो अश्वत्थप्लक्षवटा वः किं दृष्टोहरि राननभावः ?
सहि न श्चोरित हृदयो यातः प्रेमहसित दृक्शर संघातः ॥२०७

श्रीराधा रमण, इस प्रकार विहार रत होने पर युवतिगण के चित्त में महा अभिमान उदित हुआ। यह देखकर राधानायक, निज प्रकाश मूर्त्ति समूह को अन्तर्हित करके अन्यत्र कहीं पर विराजित हो गए ॥ ॥२०३॥ मुरलीरव से गोपबालागण को बुलाकर एवं प्रचुरतर अनुनय से श्रीराधा को लाकर गोपीगण के रति राशिजात अभिमान को प्रशमित करने के लिए कृपानिधि कृष्णचन्द्र तब प्रियतमा राधा के साथ अन्यत्र विचरण करने लगे ॥२०४॥ श्रीकृष्ण के अन्तर्धान से गोपीगण तत्क्षणात् असीम शोक सागर में निमग्न हो गई। 'हा नाथ हा नाथ' कहकर व्याकुल भाव से विलविलाकर हरि को इधर उधर ढुंढने में लग गई ॥२०५॥ उनके हृदय में चिन्मय हरिरूप उदित हुआ, उन्होंने मूर्त्त सुरत की भाँति श्रीहरि की मूर्त्ति को प्रत्यक्ष किया एवं वृन्दाविपिन के लतातरुवृन्द के निकट उनकी कथा पूछने लगीं ॥२०६॥ हे अश्वत्थ प्लक्ष! पापड़ी एवं वट वृक्षगण! तुम सबने क्या विनम्र मूर्त्ति श्रीहरि का दर्शन किया है? प्रेममय हँसी से तथा नयन वाण के आघात से हमारे हृदय को चोरी कर वह भाग गया है ॥२०७॥

भो भो श्चम्पक केशरनाग, प्रियकाशोकवकुलपुन्नाग !
जम्बुकुरुवकपनसरसालक्रमुक कुटज वकतालतमाल ॥२०८
अहह महान्तो यूयं सदया, वयमपि विरह व्याकुलहृदयाः ।
कथयत मानवतीहृतमानस्मितवदनस्य हरेः पदवीं नः ॥२०९
अयि सखि माधवि मालति मल्लि जातियूति नीलिनि शेफालि ।
मा गोपयत गोपकुलतिलकं कृतकर संस्पर्श किलरसिकम् ॥२१०
अयि कल्याणि तुलसि हरिचरणा, म्बुजदयितं त्वं कुरु वः करुणाम् ।
क्वास्ते वद नो जीवित बन्धुः सकल कलानिधिररितरससिन्धुः ॥२११
अथ काश्चन हरि लीला ललिता, अनुकृतवत्यो मिथआर्बालताः ।
अत्यावेशाद् विस्मित देहाः काश्चन भेजु र्मधुरतदीहाः ॥२१२
द्रुमलतिकाः पुनरपि पृच्छन्त्यः, कुञ्जं कुञ्ज मुहुरभियान्त्यः ।
ददृशुः क्वचपद पङ्क्ति ललितां ध्वजवज्राङ्कुश पद्मादियुताम् ॥२१३

हे चम्पक, केशर, नाग, प्रियक 'कदम्ब' अशोक, वकुल, पुन्नाग जामुन, कुरुवक पनस (कटहर) रसाल, क्रमुक (सुपाड़ी) कुटज वक ताल, तमाल, वृक्षगण ! तुमसब महदय व महान्त हो, हमसब विरह में व्याकुल हैं' कहो ? मान वतीयों के मान को चोरीकर सुन्दर हास्य शोभित वदन हरि कहाँ चले गये ॥२०८-२०९॥ अयि सखि ! माधवि, मालति, मल्लि, जाति, युथि, नीलिनि (नील पुष्पिका) शेफालि ! तुमसब ने उनके कर स्पर्श प्राप्त किए हो, इसलिए गोपकुल तिलक रसिक श्याम सुन्दर को गोपन न करो ॥२१०॥ अयि कल्याणि तुलसि ! हरि चरण कमल प्रिये ! तुम हमारे प्रति करुणा करो, सकल कलानिधि रतिरस सिन्धु हमारे जीवित बन्धु कहाँ है कहो तो॥२११॥ अनन्तर कोई कोई गोपी परस्पर मिलित होकर हरि की मनोज्ञ लीला कदम्ब का अनुसरण करने लगी, वेपव महाआवेश से देह विस्मृत हो गई, कोई कोई तो उनकी मधुर लीलावलि भजन गाने लगी ॥२१२॥ पुनर्वार वृक्ष लताओं से कृष्णवार्त्ता को पूछ पूछ कर मुहुर्मुहु कुञ्ज कुञ्ज में ढुँढ़ते ढुँढ़ते एकान्त स्थान में ध्वज वज्र अङ्कुश, पद्मा द युक्त परम सुन्दर श्रीकृष्ण पदाङ्क पङ्क्ति को

ज्ञात्वा हरि पदचिह्नं रामा मृगयन्त्यस्तै रत्यभिरामाः ।
अन्य अपि पदलक्ष्मीश्रेणी ददृशुरिवाद् भुतमधुरिममवेणीः ॥२१४
श्रीराधाया इति निर्धारं कृत्वा बहुविध विहित विचारम् ।
ऊचुस्तत्पदपङ्कजयुगले बलदतिभावारसभर बहुले ॥२१५

अन्तर्हिते दयिता सह कृष्णचन्द्रे
गोप्योमहानिविड़शोकतमोभिरन्धाः ।
पृष्ट्वा मुहुर्द्रुमलतया अनुकृत्य लीलां
दृष्ट्वा पदानि तु तयोः समवर्णयं स्ताः २१६

कृष्ण पदाङ्कं पश्यत कामं राधापदलक्ष्म्याप्यभिरामं ।
सख्या इदं खलु दर्शित मनया दीनतमास्वतिनिर्भरकृपया २१७
प्रेष्ठतमांसार्पितभुजवल्लिः परमोज्ज्वलरसकल्पकवल्लिः ।
राधाध्रुवमिह लीलागतिभिश्चलितामृदुमृदु नुपुररुतिभिः ॥२१८
गन्तुमशक्तामथ तु कान्तां स्कन्धे कृत्वा चपल दृगन्ताम् ।

उन्होने देखा २१३ रमणीगण हरिपद चिह्न का परिचय प्राप्तकर, उक्त पद चिह्न समूह को देख देखकर हरि को अन्वेषण करते करते आश्चर्य माधुरी धारावत् अति सुन्दर अन्यान्य पदचिह्न श्रेणी को भी देखी थीं २१४। द्वीतीय पदचिह्न समूह श्रीराधा के ही हैं, इस प्रकार विचार पूर्वक निर्धारण कर रसातिशय्य बहुल उक्त पाद पद्म युगल के प्रति अनुराग से कहने लगीं ॥२१५॥ कृष्णचन्द्र दयिता राधा के सहित अन्तर्हित होनेपर गोपीगण महावन शोकान्धकार से अन्धीकृत होकर मुहुर्मुहु वृक्षलताओं को पूछ पूछ कर, एवं लीलानुकरण कर युगल के पदचिह्न राजि को देखकर इस प्रकार वर्णन करने लगीं ॥२१६॥ हे सखीगण ! श्रीराधा के पदचिह्न शोभा रहित श्रीकृष्ण के नयनाभिराम पदाङ्क समूह का दर्शन करो। दीनतम हमारे प्रति अति निर्भर (प्रगाढ़) कृपा द्वारा यह ही संसूचित हो रहे हैं॥२१७॥ हे प्रेष्ठतम श्याम के स्कन्ध देश में भुजलता को स्थापन कर परमोज्ज्वल रस कल्पलता राधा निश्चय ही यहाँ पर लीलागति को अङ्गीकार कर मृदु मधुर नूपुर ध्वनि के साथ चले हैं ॥२१८॥ यहाँ पर चञ्चल

उदवहदति पुलकित सर्वाङ्गः प्रोज्जृम्भित रतिरङ्गतरङ्गः ॥२१६
स्कन्धादवरोप्यात्र तु कान्तां प्रार्थित पुष्पां चलदलकान्तां ।
प्रेयस्यर्थे हरिरुल्लसितः कुसुमान्यवचितवानथ परितः ॥२२०
उपविश्याथ स उत्पुलकोरु द्वयमध्यगदयितामतिचारुः ।
गुम्फितवान् कुसुमैर्वरवेणी श्चक्रे चान्याभरणश्रेणीः ॥२२१
सख्यः पश्यत मञ्जुलकुञ्जे ध्रुवमिह गुञ्जनमधुकर पुञ्जे ।
प्राविशतां तौ सुरत सतृष्णौ मदकलमूर्त्ती राधाकृष्णौ ॥२२२
पश्यत पश्यत किशलयशयनं सफलीकुरुताद्यैव च नयनम् ।
सुरतविमर्दाद्विलुलितमीक्ष्यं त्रुटित कुसुम कञ्चुकशिखिपक्षाम् २२३
इत्थं परममहारसधाम्नो बहुविध पदकैर्बहुमधुरिम्नोः ।
ताः समलङ्कृत सुस्थल जातं वीक्ष्यवीक्ष्य सुखमापुरमातम् ॥१२४
श्रीराधापि स्वपदैक रसा बुध्वा ता अतिकरुणा विवशा ।
रुष्टेवाह प्रियमति कृपणं त्वं चल नहि मे शक्यं चलनम् ॥२२५

कटाक्ष शालिनी कान्तामणि राधा चलने में अक्षम होने पर रतिरस तरङ्ग व्यग्र पुलकाचित अङ्ग श्याम सुन्दर राधा को अपने कधे से वहन किये हैं ॥२१६॥ यहाँ पर चञ्चलालक शोभिता श्रीराधा पुष्प चाहने से उनको कंधे से उतार कर उल्लसित हरि प्रेयसी के लिए इतस्ततः कुसुम राशी चयन किये थे ॥२२०॥ पश्चात् परम रमणीय श्याम बैठ गये, उच्च पुलकावलि शोभित ऊरुद्वय के मध्य में दयिता राधा को बैठाकर कुसुम माल्य से अत्युत्तम वेणी एवं अन्यान्य बहुविध -अलङ्कार प्रस्तुत कर दिये हैं ॥२२१॥ हे सखीगण ! देखो ! देखो मधुकर पुञ्ज गुञ्जरित यह मञ्जुल कुञ्ज में वह सुरत सतृष्ण एवं मदकल मूर्त्ति श्रीराधा कृष्ण प्रवेश किये हैं ॥२२२॥ देखो देखो, वह किशलय निर्मित शय्या है, आज ही तुम सब नयनों को सार्थक करो ! वह सुरत विमर्दन से स्रस्त विस्रस्त है, एवं कुसुम, कञ्चुक शिखि पिच्छ भी छिन्न भिन्न हैं ॥२२३॥ इस प्रकार परम रसमय बहु मधुरिमाशाली युगल किशोर के बहुविध पदाङ्क द्वारा समलङ्कृत सुन्दर स्थानोंको देख देखकर वे सब अपरिमित आनन्दित होगई २२४ उस समय श्रीराधा भी निरतिशय करुणा के उद्रेक से विह्वला होकर

भीत भीत इव मृदुमृदु वदति स्कन्धं मम चिरमारोहेति ।
आक्षिपदेव रचित बहुलीलं सा निजपतिमपि सत्वरशीलम् ॥२२६
स चतुर चूड़ा मणिरालक्ष्य प्रेयस्या हृदगतमविलक्ष्यः ।
तत् क्षणमभवत् सातु तदैव प्राप्तवती खलु मूर्च्छनमेव ॥२२७
हरि रपि प्रकटः पुलकयुताभ्यां तामुत्थाप्यालिङ्ग्यभुजाभ्याम् ।
अकृत तदुक्तः पुनरन्तर्धि विहिततदङ्गस्पर्शसमृद्धिम् ॥२२८
दृष्ट्वा तामथ निज जीवातुं दीनतमामिव पृष्ट्वा हेतुन् ।
श्रुत्वा तन्मुखतः स्वहितार्था वाचस्ता अभवस्तु कृतार्थाः ॥२२६
स्व स्वामिन्या पुनरपि सहिताः कालिन्दीये पुलिने याताः ।
द्रष्टुं राधासहितविहारं संजगुरार्त्ताः कृष्णमुदारम् ।२३०
श्रुत्वाबहुविधकातर वचनं तासां राधाप्रणयारचनम् ।

उन सब को निज पादपद्म के एकान्त रसाश्रिता जानकर अतिदीन प्रियतम को जैसे रुष्ट होकर ही बोली, 'तुम चलते रहो, मैं चल नहीं सकती हूँ' ॥२२५॥ तब श्याम भीत सन्त्रस्त होकर ही जैसे धीरे धीरे कहने लगे-कुछ देर के लिए मेरे कंधे में ही चढ़ जाओ, बहुविध लीला रचना कारी निज प्रियतम को त्वरान्वित होते देखकर श्रीराधा तब फट्कारने लग गई ॥२२६॥ चतुर चूड़ामणि कृष्ण प्रेयसी का भाव को समझ कर तत् क्षणात् आत्म गोपन कर गए, श्रीराधा भी उसी समय मूर्च्छिता हो गई ॥२२७॥ हरि भी उसी समय पुनर्वार प्रकट होकर पुलकाञ्चित बाहु युगल द्वारा प्रिया को आलिङ्गन करके उठा लिये । श्रीराधा उनको कुछ कहने से ही हरि निज अङ्ग स्पर्शज सुख समृद्धि को दान करके ही पुनर्वार अन्तर्धान कर गये ॥२२८॥ अनन्तर गोपीगण निज जीवितेश्वरी राधा को दीनतमा की भाँति देखकर कारण पूछकर, उनके मुख से आनु पूर्वी मङ्गलमय वृत्तान्त को सुन कर खुश हो गई २२६॥ निज स्वामिनी राधा के साथ सब मिलकर कालिन्दी पुलिन में आगई, एवं राधा के साथ विहार दर्शन की लालसा से मनोज्ञ कृष्ण सङ्गीत को गाने लगीं ॥२३०॥ श्रीराधा की प्रीति से गोपीगण द्वारा सुन्दर रूप से रचित बहुविध

आविरासहरिरतुलविलासः प्रमदासदसि सुधारसहासः ॥२३१

राधाया सहजवत्सलात्मना
स्वीकृते व्रजविलासिनी गणे ।
स्वात्मभावकृतभाववैभवैः
प्रादुरास रसिकेन्द्रशेखरः ॥२३२

काश्चित् सुवलितललितप्रकाण्डं स्वांसे न्यधितकृष्णभुजदण्डम् ।
काश्चन भुवि पतितातिप्रणया श्चरणमधृतनिजवेणीलतया ॥२३३
तप्ता हरिपदपङ्कजयुगलं काश्चन निदधावधिकुचमुकुलम् ।
अन्यानिमिषितनेत्रयुगेन प्रिय मुखमपिवत्तर्षभरेण ॥३३४
अपरा पुन रपगमनाद् भीता, करयुगलेन प्रणयपरीता ।
श्रीहस्ताम्भोरुहमतिरुचिरं समधृतनागरमौलेः सुचिरम् ॥२३५
क्वापि विलोचनरन्ध्रेणालं कृत्वा हृदि परिरभ्य रसालम् ।
योगीवास्ते परमानन्दामृतह्रदमग्ना चिरमस्पन्दा ॥२३६

कातर वाक्य को सुनकर अतुल विलासी अमृत रसमय हास्य शोभी श्रीहरि प्रमदा समाज में आविर्भूत हुये ॥२३१॥ सहज वत्सल स्वभावा राधा व्रजाङ्गनागण को अङ्गीकार करने पर रसिकेन्द्र चूड़ामणि स्वात्मरति स्वात्मक्रीड़ होकरभी भाव समृद्धि को प्रकट कर उनके सम्मुख में आविर्भूत हो गये ॥२३२॥ किसी रमणी सुवलित, ललित, विशाल कृष्ण भुज दण्ड को अपनी कंधे में रखली, किसी ने अति प्रणय से दण्डवत् गिरकर निज वेणी लता द्वारा उनके चरणों को बधा । अपर किसी ने निमीलित नयनों से सतृष्ण होकर प्रियतम के मुख चुम्बन करने लगी ॥२३३-२३४॥ पुनर्वार भग जायेंगे सोचकर डर डर से अन्य गोपाङ्गना प्रीति से अपने हाथों से नागर मणि के मनोहर हस्त कमल को देरतक पकड़ रखी थी ॥२३५ किसी युवति ने रसमय श्याम को नयन द्वारासुन्दर रूप को हृदय में स्थापन कर आलिङ्गन किया, एवं योगीजन की भाँति परमानन्द रस में मग्न होकर अनेक क्षण तक स्तब्ध होकर रह गयी ॥२३६॥

श्रीराधा रसपोषण निरता स्तत्सुखसिन्धुनिमज्जनमुदिताः ।
प्रिययो र्लीलां गोपयुवत्य श्चित्रतरामवतारितवत्यः ॥२३७
स हरिर्व्रजनवयुवतिसमाजे, तदुरु निचोलोपरिसंरेजे ।
साङ्गसङ्गनिजकान्तसहितस्तासामास सपर्यामुदितः ॥२३८
बहु वाग्भङ्ग्या व्रजनव सुदृशां सहजप्रेमविवेचकमनसाम् ।
प्रीतः स्वारसिकं निजभावं प्रकटितवानथ विरहाभावम् ॥२३९

व्रजाङ्गनाभि र्मिलितः स कृष्णः
श्रीराधयातीव विराजमानः ।
तासामुरुप्रेमकथाभितृप्तो,
रासोत्सवायोल्लासितो बभूव ॥२४०

अथ कर्पूर पूर रुचिरुचिरे यमुनालहरी शीकरशिशिरे ।
उन्मद मधुकर कोकिलकीरे वहदतिपरिमलमलयसमीरे ॥२४१

गोपरमणीगण श्रीराधा के रस पोषण में निरत होकर उनके सुखसिन्धु में निमज्जित होकर खुश हो गईं, एवं प्रियतम युगल की विचित्रतर लीला की अवतारणा करने लगी ॥२३७॥ व्रजवनकी युवति के समाज में वह हरि आसन रूप में रक्षित नारियों की चून्दरीयों में बैठ गये, एवं कान्ताओं के साथ भीड़कर बैठने से कान्ताओं ने हरि की खुव सेवा की ॥२३८॥ सहज प्रेम विचारज्ञा व्रजनव युवतिगण के बहुविध भङ्गी पूर्ण वाक्यों को श्रवण कर श्रीहरि आनन्दित हो गये । और सम्भोग रसात्म स्वारसिक धीर ललित भाव को प्रकट किए ॥२३९॥ व्रजाङ्गना के साथ मिलित श्रीकृष्ण राधा के साथ मिलित होकर अतिशय शोभित हो गये । उन सब के बहुविध प्रेमालाप से अतिशय तृप्त होकर रासोत्सव को सम्पन्न करने के लिए उल्लसित हो गए ।२४० अनन्तर कर्पूर चूर्ण की भाँति मनोज्ञ यमुना पुलिन का दर्शन किए, वह पुलिन यमुना तरङ्ग स्थित जलकण से सुशीतल, मलय पवन द्वारा सुगन्धित, नव करवी पत्रादि द्वारा मण्डित था, केली विलासादि

परित: स्फुटनवकैरवनलिने विपुल कलिन्दसुतावरपुलिने ।
अद्‌भुत कल्प तरुभिरति सुभगे केलि सुसाधनवर्षिभिरनघे ॥२४२
बहुदीपिनि दिवि शारदचन्द्रे पररसभाजि चराचरवृन्दे ।
द्राघीयसि तद्रजनीयामे धुन्वति धनुरद्‌भुत नवकामे ॥२४३
सुरनरगन्धर्वाद्यैं र्वलिते निर्मितगीत सुवाद्यैः ।
नभसि रचित पुरु चित्रविताने, विलसित बहुविधदिव्यविमाने ॥२४४
सङ्गीतकपरपारगताभि र्बहुविधनृत्य कला तुलिताभिः
गौरतनुच्छवि भरित हरिद्भिः कृष्ण सुधाब्धि प्रीतिसरद्भिः ॥२४५
नाट्योचितभूषणवसनाभिः कटितट गाढ़बद्धरसनाभिः ।
हर्षोत्पुलकिततनुलतिकाभिश्चित्रारुणनवकञ्चुलिकाभिः ॥२४६
जघनान्दोलितवेणिलताभिः रत्नतिलकरञ्जितभालाभिः ।
समणिकनकमौक्तिकनासाभि र्मृदुलकपोलविचलमलकाभिः ॥२४७

की सामग्री से पूर्ण, एवं आश्चर्य कल्पतरुओं से अति सुन्दर एवं परम निर्मल था ॥२४१-२४२॥ आकाश में शरद चन्द्र निरतिशय उज्ज्वलालोक माला से उद्दीपित है, स्थावर जङ्गम उत्कृष्ट शृङ्गार रस से उन्मादित हैं। उस रास रजनी के चार प्रहर अधिकतर बढ़ गये एवं अद्‌भुत नव मदन ने पुष्प धनुष में वाण की योजना की ॥२४३॥ देव, नर, किन्नर, गन्धर्वादि सम्मिलित होकर सुसङ्गीत, सुवाद्य करने लगे, आकाश में बहु विविध चन्द्रोआ रचित थे एवं बहुविध दिव्य विमान भी शोभित रहीं ॥२४४ वे सब सङ्गीत विद्या में पारदर्शिनी थी। बहुविध नृत्य कला में निरुपमा थीं, निज अङ्ग कान्ति से दशदिक् आलोकित कर रही थीं, एवं कृष्ण रस सुधासमुद्र की प्रीति नदी स्वरूपा थीं ॥२४५॥ वे सब नाट्योपयोगी वसन भूषण पहनी थीं, कटि में रसना बँधी थीं आनन्द से अङ्गों में पुलकावलि शोभित हो रही थीं एवं सब रमणीगण अरुण वर्ण की कञ्चुलिका से शोभित थीं, जिनके नितम्ब देश में वेणीलता आन्दोलित हो रही थी, रत्न तिलक से ललाट पटल रञ्जित था, नासा में मणि सहित मुक्ता शोभित रही, एवं कपाल में कुञ्चित केश कलाप मृदुमन्द गति

मुक्ता पङ्क्तिद्युति दशनाभिः सुरुचिरचिबुकदन्तवसनाभिः ।
मुष्टिमेय कृशतरमध्याभिः स्मरनृपसिंहासनजघनाभिः ॥२४८
बद्धपरस्परचारुकराभिः कङ्कणगणझङ्कृतिरुचिराभिः ।
आजत्‌ग्रैवेयकहाराभि श्चरणरणितमणिमञ्जीराभिः ॥२४९
व्रजनगरौज्ज्वलवरतरुणीभि र्निर्म्मितहरिरसमणिवरखनिभिः ।
युगयुगमध्ये स्मरसंरम्भि, श्रीमन्नागरकण्ठधृताभिः ॥२५०
द्विद्विमध्यहरिमणिपरिरम्भि स्वर्णमणिकृतद मनिभाभिः ।
रचितेऽत्यद्‌भुत मण्डलराजे वर्षति कुसुमं सिद्धसमाजे
राधाकृष्णोन्मदरसभ सः प्रादुरास परमाद्‌भुत रासः ॥२५१

रतिरसपरसीमश्रीतनो राधिकाया ।
श्चरणकमललब्ध प्रौढ़तादात्म्यभावैः ॥
व्यरचि रुचिररासश्चित्रतत्तत् कलौघै
र्व्रजनवतरुणीनां मण्डलै र्माधवेन ॥२५२

चल रहे थे ॥२४६-२४७॥ जिनकी दन्त पङ्क्ति से ज्योति निर्गत हो रही थी, चिबुक ओष्ठदेश सुरुचिर, मध्यदेश क्षीण, एवं मुष्टिग्राह्य, करकमल परस्पर के हाथों से आवद्ध था, कङ्कन की मनोहर ध्वनि से चारों ओर निनादित है, कण्ठदेश ग्रैवेयक हार से एवं मणिमय मञ्जीर ध्वनि से चरण सुशोभित है ॥२४८-२४९॥ निर्मल हरिरस मणि विशुद्ध शृङ्गार रसकी श्रेष्ठ खनि स्वरूपा व्रजमण्डल के उज्ज्वल वराङ्गनागण प्रत्येक दो दो जन के मध्य में एक एक कामाविष्ट नागर मणि के द्वारा कण्ठ आलिङ्गित होकर रहीं ॥२५०॥ मध्यवर्त्ती दो दो इन्द्रनील मणि के द्वारा स्वर्णमणि समूह द्वारा गठित हार की भाँति गोपीगण विरचित अति अद्‌भुत रास मण्डल के ऊपर सिद्धगण कुसुम वर्षण करने लगे थे, उस समय श्रीराधा कृष्ण की उन्मद रस बहुल परमाद्‌भुत रास क्रीड़ा का प्रादुर्भाव हुआ ॥२५१॥ जिन सब के देह रति रस की परमावधि सुषमा को धारण किए हैं, उस श्रीराधिका के चरण कमल में प्रौढ़ तादात्म्य भाव प्राप्त विचित्र कला

अथ संववृधे सोऽद्भुत रासः प्रोन्मदमदनकोटिकृतः हासः
उन्मदराधिका उन्मदकृष्णः प्रोन्मदयुवतिगणोन्मदतृष्णः ॥२५३
सकलनिगमगणमुत्चमत्कारः सकलेश्वरगणरचितविचारः।
परमाश्चर्यप्रेमविकारः परमानन्दमहोत्सवसारः ॥२५४
कृष्णरसैकस्फुरदुल्लासः परमाकाशगतध्वनिभासः।
दशदिक् प्रसृमर वरपटवासः परममहापरिमलभरिताशः ॥२५५
भूषण वसन तनुच्छविवर्ष प्रोल्लसदखिल भुवन रति हर्षः।
केलिचमत्कृति परमोत्कर्षः, सकल पुमर्थः प्रथितनिकर्षः २५६
सरभस चक्रभ्रमण विलासः स्मर वश युवति परस्पर हासः।
प्रकटोन्मदनवमन्मथकोटिः प्रकटमहाद्भुत रतिपरिपाटिः ॥२५७

रसमयी व्रज युवतिगण को लेकर माधव ने मनोहर रास की रचना की ॥२५२॥ इस के बाद अद्भुत रास प्रारम्भ हुआ। कोटि कोटि मदन प्रोन्मद हास्य करने लगे, उक्त रास राधिका को उन्मत्त कर दिया, कृष्ण को उन्मत्त किया, और प्रोन्मत्ता युवतिगण भी उन्मद तृष्णा से विचलित हो उठी ॥२५३॥ जिस से वेद समूह भी विस्मित हो जाते हैं, जिस विषय में योगीश्वरगण भी विविध विचार करते रहते हैं, जिनके स्मरण से भी परमाश्चर्य प्रेम विकार उपस्थित होता है, उस परमानन्दवन्द रसोत्सव का सार ही रास है ॥२५४ सर्वत्र केवल मात्र कृष्ण रसोल्लास हो दिखाई पड़ता है, तुमुल ध्वनि से अकाश व्याप्त हो गया है, दिक् दिक् में महा पटवास कुङ्कुमादि चूर्ण बिखरे हुए हैं, अहो! परत सुगन्धि से दशों दिक् आमोदित हो गये ॥२५५॥ भूषण, वसन, देह कान्ति धारा से निखिल भुवन में सुरतानन्द की विजय घोषणा होने लगी, केली चमत्कार का परमोत्कर्ष विराजित हुआ एवं इस में ही निखिल पुरुषार्थ का परम सन्निवेश हुआ ॥२५६॥ अति वेग से चक्रभ्रमण की भाँति विलास होने लगा, काम वशवर्त्ती युवतिगण परस्पर हँसने लगीं, उन्मत्त कोटि कोटि मन्मथ प्रकटित हुये, एवं महाद्भुत रतिपरिपाटि भी प्रकटित हुई ॥२५७॥

किङ्किणि नूपुर वलय घटानां वीणावेणुतालमुरजानाम्।
प्रेमोत्तरमधुरतरगानप्रणयिसमुत्थिततुमुलस्वानः ॥२५८
गगन स्थगित सगण शरदिन्दुः स्तम्भित सुर सुतादिक सिन्धुः।
सुखविह्वल खगमृग पशुजाति पुलक वलित तरुवल्लीविततिः ॥२५९
द्रवमय विगलद् गिरिपाषाणः सरसपवन कृत सख्यभिमानः।
मूर्च्छित मुक्तनीवि सुरवनितः खचरवृष्ट कुसुमौघै निचितः ॥२६०
प्रोच्छलदतुलमहारसजलधि भग्नमुनीश्वरपरमसमाधिः।
केलिकलोत्सवपरमप्रथिमा कृष्णप्रेमसमुन्नतिसीमा ॥२६१

स्मरोन्मदैर्गोकुलसुन्दरीगणैः
समुत्थितो रासविलाससंभ्रमः।
सीमा परा प्रेमचमत्कृतीनां
स कोऽपि राधारसिकस्य जीयात् ॥२६२

किङ्किणि नूपुर वलय के निक्वण से वीणा वेणु करताल मृदङ्गादि की ध्वनि से, प्रेम पूर्ण महा मधुर सङ्गीत से, प्रणयिनी गोपीगण द्वारा तुमुल शब्द उत्थित हुआ ॥२५८॥ अकाश में गण सहित शारदचन्द्र स्थगित हुआ, यमुना मानस गङ्गादि नदी समूह की गति स्तम्भित हो गई, विहङ्ग मृगादि पशु जाति भी परम उल्लास से विह्वल हो उठी, एवं तरुलता समूह भी पुलकाञ्चित हो गये ॥२५९॥ गिरि राज के पाषाण समूह पिघल रहे हैं, सरस पवन तब सख्य भाव को प्राप्त कर लिया अर्थात् समयानुकूल मृदु मन्द वायु प्रवाहित होने लगी देव वनितागण मूर्च्छित हो गई, और उनकी नीवीबन्धनभी खुल गये, एवं आकाश चारीगण कुसुम की वर्षा करके रास मण्डल को व्याप्त कर दिये ॥२६०॥ अतुलनीय महारस सागर प्रोच्छलित हो रहा है, मुनीश्वरगण की परम समाधि टूट रही है, केलिकला के उन्मद की विशलता हो रही है, कृष्ण प्रेम समुन्नति की परमावधि सा गई है ॥२६१॥ कामोन्मत्ता गोकुल युवतिगण के सहित राधा श्याम सुन्दर के यह अपूर्व रास विलासावेश चमत्कृति की परम

तासां रसरभसवशमनसां विपुलपुलकपरिपूरितवपुषम् ।
प्रियपरिरम्भोन्मदमदनानां किमपि न संवृतकुचवसनानाम् ।।२६३
मुक्तवेणिविगलत् कुसुमानां तरलितमुक्तावलिरसनानाम् ।
प्रचलितकुण्डलगण्डतटानां विश्लथनीविप्रकटजघनानां ।।२६४
त्रुटितचारुकुचकञ्चलिकानां छिन्नमणिहाररसराणाम् ।
श्रमजलपूरितसकलतनूनां म्लिष्टविलेपाञ्जनतिलकानाम् ।।२६५
प्रियतमपरिचुम्बितवदनानां प्रियतमनखरोल्लिखितकुचानाम् ।
प्रियतमभुजयुगकलितगतानां प्रियतममृष्टश्रमसलिलानाम् ।।२६६
राधासन्धितकञ्चुलिकानां राधाग्रथितरुचिरनीवीनाम् ।
राधास्नेहैकात्म्यधनानां शतगुणवर्धिपरमसुषमाणाम् ।।२६७

सीमारूप में जय युक्त हो ।।२६२।। गोपीयों के मन केवल रास रभस के वश हो गये, देह विपुल पुलक जाल से परिपूरित हो गये, प्रियतम के परिरम्भण से मदनावेश अधिकतर बढ़ गया, उनके कुचावरण वसन विगलित होने पर भी उस को सम्भालने की शक्ति उनसब की नहीं रही ।।२६३।। मुक्त वेणी समूह से कुसुम विगलित होने लगा, मुक्तावलि, काञ्चीदाम चञ्चल हो गये, गण्ड तट पर कुण्डल द्वय झोका ले रहे हैं, एवं नीवीबन्धन शिथिल होने पर जघन देश प्रकाशित हो गया ।।२६४।। कुच युगल के आवरण रूप सुचारु कञ्चुलिका छिन्न भिन्न हो गई, माला समूह मणि हारादि भी छिन्न भिन्न हो गये, श्रम जल से सर्वाङ्ग भर गया, एवं अङ्ग राग अञ्जन तिलक प्रभृति म्लानता में आगई है ।।२६५।। उनसबके बदन, प्रियतम द्वारा चुम्बित हो गये, कुच युगल प्रियतम के नखराघात से क्षत विक्षत हो गये, प्रियतम के भुज युगल द्वारा उन सब के गलदेश गृहीत हुआ, एवं प्रियतम ने उनसब के श्रमजल राशि को मिटा दिया ।।२६६।। श्रीराधा ने उन सब की कञ्चुलिका को बंध दिया नीवी बन्धन भी कर दिया, श्रीराधा के स्नेह ही उनसब केलिए महाधन है, और उस से उनसब की सुषमा शत शत गुण से बढ़ी ।।२६७।।

माधवमधुराधरमधुपानां मुहुरति दुर्धरमदनमदानाम् ।
परकाष्ठांगतउन्मदललितः कोऽपि सुखाम्भोनिधिरुच्छलितः ।।२६८
गायन्तीनां दयितमिथुनं सानुरागैः सुरागै
र्नृत्यन्तीनां प्रमदमदनोद्दामलीलाकलाभिः ।
श्रीराधायाश्चरणकमलस्नेहतादात्म्यभाजाम्
रासक्रीड़ासुखमनुपमं वल्लवीनां बभूव ।।२६९
तत्र यदा सुरतैकसतृष्णौ मण्डलमध्ये राधाकृष्णौ ।
मिलितौ ननृततुरथवा क्रमशः कोऽपि तदासोद्रासे सुरसः २७०
वाद्यगीतपरयुवतिवृन्दे पूर्णचमत्कृतिपरमानन्दे ।
तददर्शयत सुनागरमिथुनं स्वस्वसुशिक्षा अधिरसनटनम् ।।२७१
राधा तत् प्रिययोरभवंस्ता एकैकाङ्गेऽद्भुतरसवलितः ।
चलनविभङ्गीरतिसुविचित्रा वीक्ष्य वीक्ष्य चिरमनुकृतचित्राः २७२

माधव ने उनसब के मधुर अधर के मधुपान किया, मुहुर्मुहु उन सब के मदनावेश अति दुर्घर्ष भाव को प्राप्त किया अहो ! चरमावधि प्राप्त उन्मादनादायक, अतिमनोज्ञ किसी एक अनिर्वाच्य सुख समुद्र उच्छलित हुआ ।।२६८।। वे सब सुन्दर सुन्दर राग रागिणी आलाप के द्वारा युगल किशोर की कीर्त्तिगाथा को गाने लगीं, प्रमद मदन के आवेश से उन्होंने अपरिसीमलीला कलादि प्रकट कर नृत्य किया, उन्होंने श्रीराधा चरण कमल के साथ स्नेह से तादात्म्य भाव को प्राप्त कर लिया, अहो ! गोपीयों की वह क्रीड़ा निरुपम सुख निदान रूप हो गई थी ।।२६९।। अनन्तर जब सुरतैकलालस श्रीराधा कृष्ण मिलित होकर अथवा क्रमशः उस रास मण्डल में नृत्य करने लग गये तो महा रस प्रकटित हुआ ।।२७०।। गोपीगण नृत्य गीत में तन्मय हो जाने पर एवं रास मण्डल में पूर्ण चमत्कारमय परमानन्द विराजमान होने से मनोमोहन नागर द्वय ने रसपूर्ण नृत्य विद्या को प्रकटन किया ।।२७१ राधा एवं उनके प्रियतम कृष्ण के एक अङ्ग की अति विचित्र चलन त्रिभङ्गी को देखकर गोपीगण अद्भुत रस युक्ता हो गई अनेकक्षण

सङ्गीतक बहुभङ्गीसारं कमपि विहारं परमोदारम् ।
राधा तन्नागरयोर्मधुरं दृष्ट्वा मूर्च्छद् वनमपि सुचिरम् ॥२७३
रसमयनृत्यकलाद्भुतसङ्गी तुङ्गीलनवरतिरङ्गतरङ्गी ।
राधामाधवयो रतिललितः कोऽपि विलासः समभूदुदितः ॥२७४
अलकचिबुककुचकरस्पर्शी नीविधारणमधरामृतकर्षी
परमचित्रपरिरम्भणचुम्बं शुशुभे तल्ललितं रसजृम्भम् ॥२७५
मूर्च्छितमलुठद्गोपीवृन्दं मूर्च्छितमपतत् खगपशुवृन्दम् ।
मूर्च्छामापलतातरुवृन्दं सर्वममूर्च्छत्तत्र रसान्धम् ॥२७६
तत्र रचितपरमाद्भुतकेलिः शुशुभे स रसिकमण्डलमौलिः ।
अथ रसिकेन्द्रः श्रितनिजकान्तः सुतुमुलरासक्रीड़ाश्रान्तः ।
अविशद् वारि सगोपीवृन्दः करिणीगणवृत इव कलभेन्द्रः ॥२७७

तक चित्र पुत्तलिका की भाँति रह गई ॥२७२॥ राधा एवं उनके नागर के सङ्गीत चातुर्य एवं परम रमणीय मधुर अनिर्वाच्य विहार को देखकर वृन्दावनस्थ स्थावर जङ्गमादि अनेक समय तक मूर्च्छित होकर रह गये ॥२७३॥ तब रसमय नृत्यकला के साहचर्य से अति उद्दाम नव सुरत द्वारा तरङ्गायित श्रीराधा माधव के अनिर्वचनीय विलास उदित हुआ ॥२७४॥ अलक कुञ्चित केश कलाप चिवुक एवं कुच मण्डलादि में कर स्पर्श होने लगा, नीवि धारण, अधरामृत का आकर्षण होने लगा। परम विचित्र परिरम्भण चुम्वनादि होने लगा और वह रस विलास भी क्रमशः सुन्दरतर हो गया ॥२७५॥ गोपीगण मूर्च्छित होकर लौट लगाने लगीं पशु पक्षीगण मूर्च्छित होकर पृथ्वी में गिरने लगे वृक्ष लतादि भी मूर्च्छित हो गये अधिक क्या कहूँ। वहाँ के सब के सब व्यक्ति रसान्ध होकर मूर्च्छाग्रस्त हो गये ॥२७६॥ तत् पश्चात् रसिक राज, निज कान्तामणि के साथ सुतुमुल रासक्रीड़ा से परिश्रान्त होकर गोपीवृन्द के साथ करिणी गण के साथ मत्त करिवर की भाँति जल क्रीड़ा के लिऐ जल में प्रविष्ट हो गये ॥२७७॥ रसिकेन्द्र चूड़ामणि परमाद्भुत केलीं विलासादि की रचना कर शोभा विस्तार करने लगे, जल के ओर मुह कर राधा

राधापक्षव्रजयुवतिभिः पर्युक्षितउद्धसितमुखीभिः ॥२७८
क्रीड़ित्वा बहु सलिलोत्तीर्णः पुनरन्याम्वरभूषणपूर्णः ।
कुङ्कुमलिप्तः प्रियया दीप्तः कुञ्जशयनमधि स सुखं सुप्तः ॥२७९
एवमपरां शारदरजनीरखिला एव व्रजनवतरुणीः ।
आनीयारचि राधापतिना रासो नवनवरतिवशमतिना ॥२८०
परम रस समुद्रोज्जृम्भणस्याति काष्ठा ।
परम पुरुषलीलारूपशोभातिकाष्ठा
परमविलसदाद्यप्रेमसौभाग्यभूमा ।
जयति परपुमर्थोत्कर्षसीमा स रासः ॥२८१
शुद्धभावस्पृहावत्या मत्या कृष्णैकदत्तया ।
अद्भुतोऽयंमयारासप्रबन्धः प्रकटीकृतः ॥२८२
यथास्फूर्त्तिमया रास विलासोराधिकापतेः ।
वर्णितःस्वमुदे तेन मुदिताः सन्तुसाधवः ॥२८३

मध्य वर्त्तिनी व्रज नारीगण को उत्तम रूप से सिञ्चित किए ॥२७८॥ बहुविध जल क्रीड़ा के वाद श्याम सुन्दर जल से तीर में उठकर पुनर्वार वसन भूषणादि को धारण किए, अङ्ग में कुङ्कुम लेपन कर प्रियाके साथ शोभित होकर कुञ्ज मध्य में सुख शय्या में सोगये ॥२७९ इस प्रकार अनन्त शारद रजनी में निखिल व्रज नव युवतिगण को ही आकर्षण कर श्रीराधा वल्लभ नव नव रति रस के वश होकर रास रचना किये ॥२८०॥ वह रास परम रस सागर की प्रकाशशील चरमावधि है, परम पुरुष की लीला रूप, शोभा की चरमावधि है, परम विलास मय आद्य (शृङ्गार) प्रेम सौभाग्यातिशय व्यञ्जक एवं परम पुरुषार्थ शिरोमणि की सीमा रूप में उत्कर्ष मण्डित हो ॥२८१ शुद्धभाव स्पृहा शीला एवं श्रीकृष्ण में अनन्य निष्ठायुक्त मति के द्वारा यह अद्भुत रास प्रबन्धः मेरे से प्रकट हुआ ॥२८२॥ स्फुर्त्ति के अनुसार मैंने श्रीराधा रमण के यह रास विलास का निज आनन्द के

इमं रासप्रबन्धं यो गायेत् कृष्णानुरक्तधीः।
लुठन्तितत् पदतले पुमर्थाः सर्व्व उत्तमाः ।।२८४

इति समाप्तोऽयं रासप्रबन्धः।

लिए वर्णन किया, इससे साधुगण भी आनन्दित होंगे ।।२८३।।
कृष्णानुरक्तचित्त व्यक्ति यदि इस राम प्रबन्ध का गान करें तो उनके पदतल में सकल उत्तम पुरुषार्थ लुठित होगा ।।२८४।।

इति श्रीप्रबोधानन्द सरस्वति विरचित
आश्चर्यरासप्रबन्धानुवाद समाप्त ।।

गौरगदाधरंनत्वा प्रेमानन्दकलेवरम् ।
विदुषा हरिदासेन भाषाव्याख्याकृतामुदा ।।

१। वेदान्तदर्शनम् "भागवतभाष्योपेतम्" महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासदेव प्रणीत, ब्रह्मसूत्रों के अकृत्रिम अर्थस्वरूप श्रीमद्भागवत के पद्यो के द्वारा सूत्रार्थों का समन्वय इसमें मनोरमरूप में विद्यमान है।

२। श्रीनृसिंह चतुर्दशी भक्ताह्लादकारी श्रीनृसिंहदेव की महिमा व्रतविधानात्मक अपूर्व ग्रन्थ।

३। श्रीसाधनामृतचन्द्रिका गोवर्धन निवासी सिद्ध श्रीकृष्णदास बाबा विरचित रागानुगीय वैष्णव पद्धति।

४। श्रीसाधनामृतचन्द्रिका (बङ्गला पयार) गोवर्धन निवासी सिद्ध श्रीकृष्णदास बाबा के द्वारा रचित सुललित छन्दोबद्ध ग्रन्थ।

५। श्रीगौरगोविन्दार्चन पद्धति गोवर्धन निवासी सिद्ध श्रीकृष्णदास बाबा विरचित सपरिकर श्रीनन्दनन्दन श्रीभानुनन्दिनी के स्वरूप निर्णयात्मक ग्रन्थ।

६। श्रीराधाकृष्णार्च्चन द्वीपिका श्रीजीवगोस्वामिपाद कृत श्रीराधासम्बलित श्रीकृष्ण पूजन प्रतिपादन का सर्वादि ग्रन्थ।

७। श्रीगोविन्दलीलामृतम् (मूल, टीका, अनुवाद सह १-४ सर्ग) "श्रीकृष्णदास कविराज प्रणीतम्" स्वारसिकी उपासना के अनुसार अष्टकालीय लीला स्मरणात्मक प्रमुख ग्रन्थ।

८। श्रीगोविन्दलीलामृतम् ५ सर्ग से ११सर्ग पर्यन्त(टीका सानुवाद)

९। श्रीगोविन्दलीलामृतम् १२ सर्ग से २३ सर्ग पर्यन्त ,, ,,

१०। ऐश्वर्यकादम्बिनी (मूल अनुवाद) श्रीबलदेवविद्याभूषणकृत भागवतीय श्रीकृष्णलीला का क्रमबद्ध ऐश्वर्य मण्डित वर्णन, श्रीवृषभानु महाराज एवं भानुनन्दिनी का मनोरम वर्णन इसमें है।

११। संकल्पकल्पद्रुम (सटीक, सानुवाद) श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ति पाद कृत स्वारसिकी उपासना का प्रमुख ग्रन्थ।

१२। चतुःश्लोकी भाष्यम् (सानुवाद) श्रीनिवासाचार्य प्रभु कृत चतुःश्लोकी भागवत की स्वारसिकी व्याख्या।

१३। श्रीकृष्णभजनामृत (सानुवाद) श्रीनरहरिसरकार ठक्कुरकृत अपूर्व धर्मीय संविधानात्मक ग्रन्थ।